

विकास कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता: एक मूल्यांकन

राजमणि त्रिपाठी



गोविन्द बल्लभ पंत सामाजिक विज्ञान संस्थान
इलाहाबाद

विकाश कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता: एक मूल्यांकन

राजमणि त्रिपाठी



गोविन्द बल्लभ पंत सामाजिक विज्ञान संस्थान
इलाहाबाद

शोध टीम

परियोजना निदेशक
डॉ० राजमणि त्रिपाठी

शोध अन्वेषक
श्रीमती सरोज तिवारी
हर्ष मणि सिंह

विषय सूची

	प्राक्कथन	
प्रथम अध्याय	पंचायतीराज व्यवस्था: एक परिदृश्य	1 - 12
	पंचायतों का विकास	2
	प्राचीन भारत में पंचायतराज	2
	मुगलकाल में पंचायतराज	3
	ब्रिटिश काल में पंचायतराज	4
	स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् पंचायतराज	5
	73वाँ संविधान संशोधन एवं पंचायत संस्थाओं का स्वरूप	8
	पंचायतीराज संस्थाओं के कार्य एवं शक्तियाँ	9
	संदर्भ ग्रंथ	11
द्वितीय अध्याय	शोध की समस्या और अध्ययन पद्धति	13 - 24
	अध्ययन का उद्देश्य	14
	अध्ययन की कार्य योजना	14
	साहित्य की समीक्षा	15
	अध्ययन का समग्र और निदर्श	18
	स्थिति एवं विस्तार	18
	जलवायु	19
	जनसंख्या	20
	सार्वजनिक सुविधाएँ - सड़क, जल, यातायात, कृषि	20
	संदर्भ ग्रंथ	22
तृतीय अध्याय	पंचायत प्रतिनिधियों की सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि	25 - 37
	आयु विभेद	25
	जातिगत संस्तरण	27
	शैक्षणिक स्थिति	29
	व्यवसायिक स्थिति	33
	आयगत स्थिति	34
	संदर्भ ग्रंथ	37

चतुर्थ अध्याय	ग्राम विकास कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता	38 - 53
(क)	कृषि विकास कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता	38 - 44
	उन्नतिशील बीजों का प्रयोग	38
	रासायनिक उर्वरक का उपयोग	40
	कीटनाशकों का उपयोग	40
	नये कृषि यंत्रों का प्रयोग	41
	किसान सेवा केन्द्र	42
	सिंचाई के साधन	43
(ख)	स्वास्थ्य कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता	44 - 48
	भोजन की समस्या	45
	स्वास्थ्य सुविधाएं	46
(ग)	प्राथमिक शिक्षा विकास कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता	48 - 53
	ग्राम पंचायत एवं शिक्षा समितियों के शिक्षा विषयक कार्य	48
	ग्रामीण अंचलों में प्राथमिक विद्यालयों की उपलब्धता	49
	प्राथमिक विद्यालयों में दोपहर का भोजन	50
	प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षण की गुणवत्ता	51
	गांवों में बालिका विद्यालय हेतु लोगों की जागरूकता	51
	बीच में विद्यालय छोड़ना	52
पंचम अध्याय	निष्कर्ष एवं सुझाव	54 - 60
	कृषि विकास	56
	स्वास्थ्य विकास	56
	शिक्षा विकास	57
	सुझाव	58

प्राक्कथन

पंचायतीराज के द्वारा ग्राम्य विकास के लक्ष्य की प्राप्ति एवं लोगों की आकांक्षाओं की समुचित पूर्ति तथा गांवों के विकास कार्यक्रमों में जन-सहभागिता एक बड़ी सीमा तक पंचायत प्रतिनिधियों की क्रियाशीलता पर निर्भर करती है। पंचायत प्रतिनिधि जन-सामान्य में उत्साह तथा प्रेरणा का संचार करते हैं जिसकी कमी हमारी व्यवस्था की एक बड़ी त्रासदी रही है। राष्ट्रीय विकास परिषद तथा राज्य सरकारों ने जबसे सामुदायिक विकास हेतु जनतांत्रिक विकेन्द्रीकरण को एक नीति के रूप में स्वीकार किया है तबसे विभिन्न स्तरों पर पंचायत प्रतिनिधियों की भूमिका का महत्व बढ़ा है। जब तक कोई समुदाय अपनी समस्याओं को नहीं समझता, अपने उत्तरदायित्वों का अनुभव नहीं करता तथा चुने गये प्रतिनिधियों के माध्यम से ग्राम्य विकास के लिए शक्ति का आवश्यक प्रयोग नहीं करता तब तक पंचायती राज के वास्तविक स्वरूप का निर्माण संभव नहीं है। यह निर्विवाद सत्य है कि विकास कार्यक्रमों की सफलता जन-सहभागिता पर ही निर्भर है। जन-सहभागिता तब तक सम्भव नहीं है जब तक कि स्थानीय पंचायत प्रतिनिधि ग्रामवासियों को गांव की समस्याओं, विकास योजनाओं तथा विकास कार्यक्रमों के प्रति जागरूक नहीं बनाता। इसी परिप्रेक्ष्य में उत्तर प्रदेश के सामुदायिक विकास कार्यक्रमों में मुख्य रूप से कृषि विकास, स्वास्थ्य विकास तथा शिक्षा विकास कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता की सीमा ज्ञात करने के उद्देश्य से एक व्यापक अध्ययन करके शोध प्रबन्ध तैयार करने का प्रयास किया गया है।

शोध प्रबन्ध पांच अध्यायों में विभाजित किया गया है। प्रथम अध्याय पंचायतीराज व्यवस्था: एक परिदृश्य में पंचायतों का विकास, प्राचीन भारत में पंचायतराज, मुगल काल में पंचायतराज ब्रिटिश काल में पंचायत राज, स्वतंत्रता के पश्चात् पंचायतराज 73वां संविधान संशोधन एवं पंचायत संस्थाओं का स्वरूप, पंचायतीराज संस्थाओं के कार्य एवं शक्तियों पर आधारित प्रमुख अध्ययनों का सर्वेक्षण किया गया है। द्वितीय अध्याय में वर्तमान शोध की समस्या और अध्ययन पद्धति का निरूपण किया गया है। तृतीय अध्याय में सम्मिलित पंचायत प्रतिनिधियों की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि की विवेचना, उनकी आयु, जातिगत संरचना, शैक्षिक स्थिति, व्यवसायिक स्थिति, आयगत स्थिति के संदर्भ में किया गया है। चतुर्थ अध्याय में ग्राम विकास कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता के स्तर का विस्तृत आंकलन किया गया है। पंचम अध्याय में सम्पूर्ण अध्ययन के निष्कर्ष तथा विकास कार्यक्रमों में जन-सहभागिता को प्रभावी बनाने हेतु कुछ सुझाव सुझाये गये हैं।

समाज वैज्ञानिक शोध एक सहकारी प्रक्रिया है। वर्तमान शोध को परिपूर्ण करने में कई महानुभावों और संस्थाओं के सौहार्दपूर्ण सहयोग प्राप्त हुए हैं। सहयोग प्रदान करने वाले उन सभी लोगों के प्रति आभार प्रकट करना शोधकर्ता का नैतिक कर्तव्य हो जाता है। अतः सर्वप्रथम मैं होलागढ़ विकासखण्ड के ग्राम पंचायत प्रतिनिधियों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने मुझे साक्षात्कार परिस्थितियों में प्राथमिक आंकड़ों के संकलन में धैर्यपूर्वक सहयोग किया क्योंकि उनके विचारों और व्यवहारों पर आधारित यह शोध कार्य उनके सहयोग से ही सम्भव हो सका। प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र की जनता एवं होलागढ़ विकासखण्ड के खण्ड विकास अधिकारी एवं उनके सहयोगियों के प्रति आभार व्यक्त करना चाहता हूँ, जिन्होंने इस कार्य में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

संस्थान के निदेशक प्रोफेसर आर. सी. त्रिपाठी जिनके प्रोत्साहन से इस शोध की जिज्ञासा पैदा हुई। उनके प्रति अपनी कृतज्ञता को शब्दों में प्रकट करना केवल औपचारिकता मात्र होगी। अपनी व्यस्तताओं के बीच उदारतापूर्वक उन्होंने समय-समय पर उत्साहवर्द्धन करते रहे जिसके कारण यह शोध कार्य समय से पूरा करना संभव हो सका। संस्थान के अपने सहयोगी डॉ. एस. के. पन्त एवं डॉ. सुनीत सिंह समय-समय पर पंचायतीराज से सम्बन्धित अपने ज्ञान से अभिसिंचित करते रहे उनके प्रति भी अपना आभार व्यक्त करना चाहता हूँ। संस्थान के कुलसचिव श्री संजीव कुमार के प्रति भी अपना आभार ज्ञापित करना चाहता हूँ जिनका स्नेह और सहयोग निरन्तर शिरोधार्य रहा। अपने शुभचिंतक श्री अंजेश कुमार का भी अत्यन्त आभारी हूँ, जिन्होंने आंकड़ों के विश्लेषण में अपना पूर्ण समय और सहयोग प्रदान करते रहे। डॉ. वीरेन्द्र बहादुर सिंह, श्री अभिषेक श्रीवास्तव तथा निर्मल कुमार जोशी को भी धन्यवाद देना चाहता हूँ जिनके द्वारा समय-समय पर इस शोध परियोजना को पूर्ण करने में मदद मिली है। इस परियोजना के शोध अन्वेषक श्री मती सरोज तिवारी एवं हर्षमणि सिंह भी धन्यवाद के पात्र हैं। विशेष रूप से श्री प्रमोद कुमार अग्रवाल भी धन्यवाद के पात्र हैं, जिन्होंने शोध प्रबन्ध की माण्डुलिपि के टंकण कार्य को कम्प्यूटर पर तैयार करने में अपना पूर्ण सहयोग प्रदान किया। अन्त में अन्य सभी महानुभावों को धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ, जिन्होंने प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से शोध में सहयोग प्रदान किया है।

(राज मणि त्रिपाठी)

पंचायती राज व्यवस्था : एक परिदृश्य

विश्व की वृहद्वत्तम लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था भारत की प्रमुख विशेषता है। लोकतंत्र मूलतः विकेन्द्रीकरण पर आधारित शासन व्यवस्था होती है। शासन के ऊपरी स्तरों (केन्द्र एवं राज्य) पर कोई भी लोकतंत्र तब तक सफल नहीं हो सकता, जब तक कि निचले स्तर पर लोकतांत्रिक मान्यताएं एवं मूल्य शक्तिशाली न हों। यदि लोकतंत्र का अर्थ जनता की समस्याएं एवं उनके समाधान की प्रक्रिया में जनता की पूर्ण तथा प्रत्यक्ष भागीदारी है, तो प्रत्यक्ष, स्पष्ट एवं विशिष्ट लोकतंत्र का प्रमाण उतना सटीक अन्यत्र देखने को नहीं मिलेगा जितना स्थानीय स्तर पर। इसका कारण यह है कि वहाँ जनता और उनके प्रतिनिधियों, शासक एवं शासितों के बीच सम्पर्क अपेक्षाकृत निरन्तर, सतर्कता पूर्ण एवं अधिक नियंत्रणपूर्ण होते हैं। लोकतंत्र की सर्वश्रेष्ठ पाठशाला और उसकी सफलता की सबसे अधिक गारन्टी स्थानीय स्वायत्त शासन का संचालन है।

पंचायतराज प्रत्यक्ष लोकतंत्र का आधुनिक रूपान्तरण है। यह शासन को जनता के सन्निकट ला देता है। भारत की तरह अधिक आबादी और क्षेत्रीय-विभिन्नता वाले विशाल देश में लोकतंत्र को सार्थक एवं कल्याणकारी बनाने के लिए विकेन्द्रीकरण अंतर्निहित अनिवार्यता है। उच्च स्तर से निम्न स्तर की ओर शक्ति का अन्तरण होना लोकतांत्रिक राज्य व्यवस्था में आवश्यक एवं वांछित प्रक्रिया है। लोकतंत्र में सम्प्रभुसत्ता का प्रवाह उच्च स्तर से निम्न स्तर की ओर होता है, जबकि निम्न स्तर से उच्च स्तर की ओर होना चाहिए।

लोकतंत्रीय राजनीतिक व्यवस्था में पंचायत राज ही वह माध्यम है जो शासन को सामान्य जन के दरवाजे तक लाता है। लोकतंत्र की संकल्पना को अधिक यथार्थ में अस्तित्व प्रदान करने की दिशा में पंचायतराज व्यवस्था एक ठोस कदम है। पंचायतराज व्यवस्था में स्थानीय लोगों की स्थानीय शासन कार्यों में अनवरत रुचि बनी रहती है, क्योंकि वे अपनी स्थानीय समस्याओं का स्थानीय पद्धति से समाधान कर सकते हैं। ये लोग अपने स्थानीय स्तर पर नियामकीय एवं वैकासिक कार्यों का सम्पादन करने में सहायक सिद्ध होते हैं। अतः इस अर्थ में पंचायतराज संस्थाएं स्थानीय जन-सामान्य को शासन कार्यों में भागीदारी की प्रक्रिया के माध्यम से लोगों को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से शासन एवं प्रशासन का प्रशिक्षण स्वतः ही प्रदान करती हैं। स्थानीय स्तर पर प्रशिक्षण प्राप्त कर ये स्थानीय जनप्रतिनिधि ही कालान्तर में विधानसभा एवं संसद का प्रतिनिधित्व कर राष्ट्र को नेतृत्व प्रदान करते हैं।

पंचायतों का विकास

पंचायतीराज व्यवस्था लोकतंत्र की रीढ़ है और विकेन्द्रीकरण का सशक्त साधन। गाँवों में बसे भारत के सर्वांगीण विकास की कल्पना सशक्त पंचायतों के बिना नहीं की जा सकती। जन-जन को शासन की गतिविधियों में सक्रिय बनाये जाने के दृष्टिकोण पर आधारित पंचायतीराज व्यवस्था ऐतिहासिक अवधारणा है। शासनिक संगठन एवं स्वरूप चाहे जो रहा हो, पंचायतीराज संस्थाएं मानव की मनोवैज्ञानिक एवं व्यावहारिक आवश्यकताओं के रूप में विद्यमान रही हैं। देश में पंचायतों की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। इस तथ्य के ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध हैं कि देश में व्यक्तिगत विवादों से जुड़े मामलों में ही नहीं, बल्कि राज्य की योजनाओं के क्रियान्वयन तथा राजा के चुनाव जैसे अत्यधिक महत्वपूर्ण मामलों में भी पंचायतों के निर्णय सर्वमान्य होते थे। स्थानीय स्वशासन के अभियंत्र के रूप में पंचायतीराज संस्थाओं के अतीत से वर्तमान कालखण्ड तक के विकास का संक्षिप्त अध्ययन निम्नांकित शीर्षकों में किया जा सकता है।

प्राचीन भारत में पंचायतीराज

वैदिक साहित्य में ग्रामीण स्थानीय स्वशासन की संगठित व्यवस्था के कुछ संदर्भ यत्र-तत्र मिलते हैं। उस समय में 'ग्राम' प्रशासन की सबसे छोटी इकाई थी। इसका मुखिया 'ग्रामिणी' कहलाता था। 'ग्रामिणी' ग्राम के श्रेष्ठ एवं वयोवृद्ध लोगों से सलाह करके अपना कार्य करता था। यही ग्राम पंचायत का आदिम स्वरूप है। उस समय कृषि एवं पशुपालन प्रमुख व्यवसाय थे, अतः ग्रामों का नगरों की अपेक्षा अधिक महत्व था और यातायात की कठिनाई के कारण प्रत्येक ग्राम स्वावलम्बी होता था। भूमि का बटवारा, सिंचाई के साधनों का प्रबन्ध, चारागाहों की देखभाल, मेलों-उत्सवों का आयोजन, आपसी झगड़ों का फैसला, इस प्रकार के सभी कार्य ग्राम के लोग स्वयं कर लेते थे। ग्राम की रक्षा एवं मालगुजारी वसूल करना भी ग्रामिणी एवं पंचायत का कार्य था।

इस प्रकार की ग्राम संस्थाओं का उल्लेख रामायण एवं महाभारत काव्य ग्रन्थों में मिलता है। स्मृति ग्रन्थों में भी स्थानीय संस्थाओं का उल्लेख मिलता है। मनुस्मृति के अनुसार 'ग्रामिक' ग्रामीण शासन के लिए उत्तरदायी होता था। इस पदाधिकारी का मुख्य कार्य ग्रामवासियों से करों को एकत्रित करना था। यही ग्राम में शान्ति और व्यवस्था बनाए रखने के लिए भी उत्तरदायी था।

कौटिल्य का अर्थशास्त्र मौर्यकाल में प्रचलित ग्रामीण प्रशासन की व्यवस्था का विस्तृत विवरण प्रदान करता है। कौटिल्य के अनुसार प्रत्येक ग्राम का शासक पृथक-पृथक होता था। ग्राम के शासन प्रमुख को 'ग्रामिक' कहते थे। कौटिल्य का

मत था कि 10 ग्रामों के मध्य 'संग्रहण' तथा 200 ग्रामों के मध्य 'स्थानीय' नामक स्थानों की स्थापना की जानी चाहिए।

इस प्रकार भारतीय ग्रामों में वैदिक काल से स्वायत्ता का उपभोग किया। बाद के कालखण्डों में जिनमें बड़े शासकों ने साम्राज्यशाही सत्ता स्थापित करने के प्रयत्न किए, उनसे भी ग्रामों की स्थिति अव्यवस्थित नहीं हुई। महान मौर्य सम्राटों ने भी जिन्होंने शासन की छोटी सी छोटी बात में हस्तक्षेप किया, ग्राम समुदायों को उसी रूप में रहने दिया। इस प्रकार सम्पूर्ण भारत में ग्राम प्रशासन कायम रहा। यद्यपि देश के बड़े भागों में उसके स्वरूप में अन्तर पड़ गया। उत्तर भारत एवं दक्षिण के कई भागों में ग्राम समुदाय अधिकांशतः एक प्रशासनिक एवं सामाजिक इकाई रहा, उत्तर में ग्रामवासी अपने मामलों का ग्रामिणी के अन्तर्गत स्वयं प्रबन्ध करते थे, बाद में ग्रामिणी का स्थान ग्रामिक ने ले लिया। मध्य युग में गाँव के मुखिया के नाम थे मालवा प्रदेश में पट्टीकील, उत्तर में ग्रामपति या ग्रामिक, दक्षिण में ग्रामकूट। पट्टीकील शब्द से ही आधुनिक शब्द पटेल निकला है। कुछ शिलालेखों में महत्तर शब्द भी आया है। कोकण प्रदेश में अभी तक महत्ते शब्द प्रयुक्त होता है। मुखिया के नीचे पंच या गाँव के पांच अधिकारी थे। महाभारत (सभापर्व) में इनके नाम समाहर्ता, सन्निधाता, गणक, लेखक एवं साक्षी थे।

मध्य काल में प्रत्येक ग्राम की एक सभा होती थी जो अपने क्षेत्र में शासन का सम्पूर्ण कार्य संभालती थी। स्थान एवं काल के भेद से ग्राम सभाओं के संगठन भिन्न प्रकार के थे। ग्राम संस्थाओं का स्वरूप छोटे-छोटे राज्यों के समान था, इसलिए वे प्रायः उन सभी कार्यों को करती थी, जो राज्य किया करते थे।

मुगलकाल में पंचायतराज

गाँव का संगठन मुस्लिम शासन (सन् 1556-1747) के दौरान भी यथावत रहा। मुगलकालीन शासन व्यवस्था में मौर्यकाल एवं गुप्तकाल की स्वशासी निकाय अभी भी स्वस्थ एवं क्रियाशील थे। साम्राज्यों के उत्थान-पतन के पश्चात् भी परम्परागत अधिकारी, मुखिया, लेखाकार, चौकीदार अभी भी सक्रिय थे। गाँव प्रशासन की इकाई अब भी थी, किन्तु इनमें थोड़ा बहुत परिवर्तन कर दिया गया था। प्रत्येक गाँव में परम्परागत स्थानीय अधिकारी होते थे। महत्वपूर्ण पद मुखिया का होता था। जिसे प्रायः पटेल कहा जाता था एवं जो राजस्व संग्रहण का कार्य करता था। लेखाकार गाँव के लेखों का प्रभारी होता था। कृषि पर स्वामित्व की प्रविष्टि करता था और भू-राजस्व से संबंधित अभिलेखों का संधारण करता था, इसी प्रकार चौकीदार गाँव के पुलिसमैन की भूमिका निभाता था।

एस0बी0 सामन्त का मुस्लिम काल में पंचायतों के न्यायिक पहलू पर मत है कि गाँव की सभाएं मुस्लिम काल में राज्य का समर्थन रखती थी, क्योंकि हम यह

देखते हैं कि मुस्लिम शासकों के काल में जब मुस्लिम हित अन्तर्व्याप्त रहते थे, शासकों के द्वारा पंचायतों के निर्णयों को लागू किया जाता था। यह एक ऐसा प्रमाण है जो यह सिद्ध करता है कि राज्य की शक्ति हमेशा गाँव की सभा में निहित रहती थी।

इससे स्पष्ट होता है कि मौर्यकाल व गुप्तकाल की पंचायतों का रूप व उनके पीछे की भावना मुगलकाल में भी विद्यमान थी। मुखिया लेखाकार एवं चौकीदार जो पूर्व समय में पाये जाते थे, इस काल में भी शासन करते थे।

ब्रिटिश काल में पंचायतराज

ग्रामों की स्वायत्ता तथा स्थानीय प्रशासनिक संस्थाओं की अजस्र धारा 18वीं शताब्दी के मध्य में आते-आते प्रायः समाप्त हो गयी थी। इस सम्बन्ध में प्रमुख कारण प्रारम्भ में अंग्रेज शासकों ने पंचायत को नकारा, क्योंकि उनको इन संस्थाओं के महत्व का ज्ञान नहीं था, किन्तु कालान्तर में पंचायती राज संस्थाओं के महत्व की अनुभूति होने पर उन्होंने स्वयं इन संस्थाओं को शक्तिशाली बनाने के प्रयास किए। प्रारम्भ में अंग्रेज शासकों ने ग्रामीण स्वशासन के स्थान पर अधिकारी तंत्र को प्रोत्साहित किया, ताकि भारतीय जनता का अधिकाधिक शोषण किया जा सके। वस्तुतः ब्रिटिश प्रशासन के अन्तर्गत गाँवों की आत्मनिर्भरता की व्यवस्था नष्ट हो गयी थी और पंचायत व्यवस्था भी पूर्णतः शिथिल हो गई थी।

कालान्तर में अंग्रेज शासकों ने स्थानीय स्वशासन को मजबूत करने के प्रयास किए। इन प्रयासों में वायसराय लार्ड रिपन का सन् 1882 का प्रस्ताव उल्लेखनीय है। जिसके द्वारा ब्रिटिश शासन के आधीन समस्त गाँवों तक कानूनी रूप से स्थानीय स्वशासन का विस्तार किया गया।

इसके पश्चात सन् 1907 में शाही विकेन्द्रीकरण आयोग ने भी ग्रामीण प्रशासन एवं प्रबन्धन के लिए पंचायत संस्थाओं को आवश्यक बताया, किन्तु आयोग के प्रस्ताव क्रियान्वित नहीं हो सके। इसके पश्चात भारत सरकार अधिनियम 1919 निर्मित हुआ, किन्तु धनाभाव, राजनीतिक हस्तक्षेप आदि विभिन्न कारणों से स्थानीय स्वायत्त शासन के क्षेत्र में कोई उल्लेखनीय प्रगति नहीं हो सकी। सन् 1935 के भारत सरकार अधिनियम के पारित होने के पश्चात प्रान्तीय स्वायत्तता का श्रीगणेश हुआ। इसके फलस्वरूप देश में स्वतंत्रता की दिशा में एक शक्तिशाली पहल हुई, जिसका स्थानीय संस्थाओं पर एक सकारात्मक प्रभाव पड़ा। जिला बोर्डों के कार्यक्षेत्र का विस्तार किया गया तथा जिलाधीश को जिला बोर्ड का प्रमुख कार्याधिकारी नियुक्त किया गया। ऐसा कर दिए जाने से जिला बोर्ड परामर्शदात्री संस्थान न रहकर एक प्रमुख प्रशासकीय संस्था बन गई।

भारत शासन अधिनियम 1935 के अन्तर्गत 1937 में लोकप्रिय मंत्रिमण्डलों का निर्माण हुआ और उन्होंने स्थानीय संस्थाओं को जनता का वास्तविक प्रतिनिधि बनाने के लिए विधि निर्माण का कार्य हाथ में लिया, किन्तु दुर्भाग्यवश 1939 में द्वितीय विश्वयुद्ध के प्रारम्भ होने में स्थानीय संस्थाओं को लोकप्रिय बनाने का मंत्रियों का प्रारम्भिक उत्साह ठण्डा पड़ गया। मंत्रियों के विरोध के प्रतीक स्वरूप त्याग पत्र दे दिए और राज्यों में गवर्नरों का पूर्णतया एक व्यक्ति का शासन स्थापित हो गया। स्थानीय शासन के इतिहास में यह सन् 1939 से सन् 1946 तक की अवधि अंधकार का काल (डार्क पिरियड) मानी जाती है। ब्रिटिश भारत में प्राधिकारियों द्वारा इस काल के दौरान ग्राम पंचायत पूर्णतया उपेक्षित या तिरस्कृत की गयी।

स्थानीय सरकार के क्षेत्र में विपरीत विकासों के बावजूद पंचायतराज का विचार ग्राम स्वराज्य के रूप में स्वतंत्रता के संघर्ष के लिए एक महत्वपूर्ण एवं अत्यावश्यक कारक के साथ-साथ एक रणनीति के रूप में बना रहा।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात पंचायतराज

स्वाधीनता प्राप्ति के बाद भारतीय लोकतंत्र की जड़ों को स्थाई और सुदृढ़ बनाने के उद्देश्य से पंचायतों को सशक्त बनाने पर विशेष बल दिया गया। क्षेत्रीय विभिन्नताओं को ध्यान में रखकर प्रारम्भ में ग्राम पंचायतों के लिए कोई संवैधानिक प्रारूप देने पर सहमति नहीं हो पायी, फिर भी यह पंचायतों के महत्व के प्रति सहमति ही थी कि संविधान की धारा 40 में वर्णित नीति निर्देशक तत्वों में कहा गया कि गाँव स्तर पर पंचायतों के गठन को सुनिश्चित करने हेतु आवश्यक कदम राज्य उठाएगा तथा राज्य का यह दायित्व होगा कि उन्हें यह सारी शक्तियाँ तथा सत्ता प्रदान करे जिससे कि वे स्वायत्तशासी निकाय के रूप में कार्य कर सकें। इसके बाद 1958 में प्रस्तुत की गयी बलवन्त राय मेहता रिपोर्ट के साथ की संस्तुतियों के आधार पर राष्ट्रीय स्तर पर त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था के गठन की प्रक्रिया अभूतपूर्व उत्साह के साथ शुरू हुई। उस समय अपेक्षा थी कि पंचायतीराज व्यवस्था लोकतंत्र को ग्रामीण जनता के दरवाजे तक पहुँचा सकेगी। ग्रामीण जन मानस के भविष्य से जुड़े कार्यक्रमों एवं योजनाओं के लिए नीति-निर्धारण तथा क्रियान्वयन की प्रक्रिया में जन सहभागिता प्रोत्साहन कर सकेगी प्रशासन को स्थानीय लोकप्रिय सत्ता के आधीन नियंत्रित कर सकेगी तथा आर्थिक एवं सामाजिक विकास की प्रक्रिया को गति प्रदान कर सकेगी। बलवन्त राय मेहता रिपोर्ट (1957) में वर्णित संस्तुतियों को ध्यान में रखकर विभिन्न प्रान्तों ने पंचायतीराज व्यवस्था लागू की। प्रान्तों में व्याप्त विभिन्नताओं के कारण, क्रियान्वयन के स्तर पर स्वरूप में भिन्नता होना स्वाभाविक था। कुछ में सफलता मिली तो कुछ में प्रगति उत्साहजनक नहीं रही। जनता पार्टी दल की सरकार बनने के बाद पुनः पंचायतों को राजनैतिक स्तर पर महिमामण्डित किया गया तथा उन्हें सक्रिय बनाने के उद्देश्य से अशोक मेहता कमेटी गठित की गयी, जिसने 1978 में प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में पंचायतीराज प्रणाली को अपेक्षित सफलता न मिल पाने की

स्थिति को स्वीकार किया तथा इसके लिए प्रशासनिक उदासीनता राजनैतिक प्रतिबद्धता में गिरावट तथा अवधारणा के स्तर पर स्पष्टता में अभाव को उत्तरदायी बताया। अशोक मेहता कमेटी ने पंचायतीराज संस्थाओं को ग्रामीण विकास के लिए चल रही प्रक्रिया के साथ समग्र रूप से जोड़ने की संस्तुति की। मानव संसाधन को वित्तीय संसाधन की तुलना में अधिक महत्व करते हुए समिति ने कहा कि विकास के क्रम में अन्य अवयवों के समान मानव एक अवयव मात्र नहीं है, बल्कि वह समाज के स्वरूप का निर्धारक कारक है। इसलिए पंचायतीराज संस्थाओं का मूल उद्देश्य मानव संसाधन का विकास करना होना चाहिए परन्तु जनता पार्टी दल की सरकार के पतन के बाद एक बार पुनः पंचायतों की चर्चा राष्ट्रीय कार्यसूची से हट सी गयी।

लगभग एक दशक के बाद डी0वी0के0 राव की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गयी, जिसने 1985 में अपनी रिपोर्ट में पंचायतों के कमजोर होने के दो प्रमुख कारण बताये, वित्तीय संसाधनों की कमी तथा नियमित चुनावों का न होना। समिति ने खेद प्रकट किया कि विभिन्न प्रान्तों में सूखा, बाढ़ जनगणना आम चुनाव परिसीमन आरक्षण आदि अनेक बहानों से पंचायतों के चुनाव टाले जाते रहे। राव समिति ने स्वीकार किया कि छठी पंचवर्षीय योजना में वर्णित उद्देश्य की सफलता हेतु पंचायतीराज व्यवस्था के विभिन्न स्तरों पर ऐसे कार्यों को सौंपा जाना जरूरी है, जिसके नियोजन व क्रियान्वयन में वे सक्षम हों। जिला एवं ब्लाक स्तर की योजनाओं के निर्माण तथा न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के नियोजन तथा क्रियान्वयन की प्रक्रिया में पंचायतों को जोड़े जाने के उद्देश्य में मिली आंशिक सफलता की सराहना करते हुए समिति ने स्वीकार किया कि जहाँ भी पंचायतों को जोड़ा गया लाभार्थियों की सही पहचान तथा योजनाओं के निर्माण में अपेक्षाकृत बेहतर परिणाम प्राप्त हुए। राव समिति ने सिफारिश की कि पंचायतीराज संस्थाओं को पुनर्जीवित करने की आवश्यकता है। इस दृष्टि से सौंपे गये कार्यों और दायित्वों के सुचारु रूप से निर्वाह कर सकने के लिए पंचायतों को आवश्यक संसाधन और अधिकार प्रदान किए जाने चाहिए।

इसी क्रम में पंचायतों की कार्यप्रणाली का अध्ययन करने के उद्देश्य से सन् 1988 में श्री एल0एम0 सिंहवी के नेतृत्व में एक उच्च स्तरीय समिति का गठन किया गया। समिति ने अपनी रिपोर्ट में पंचायतीराज संस्थाओं के गिरावट को स्वीकारते हुए इसके लिए अवधारणात्मक अस्पष्टता, राजनैतिक प्रतिबद्धता में कमी राष्ट्रीय प्राथमिकता के रूप में स्वीकार न करने, शोध मूल्यांकन एवं सुधारों के लिए निरन्तर प्रयास का अभाव आदि कारणों को उत्तरदायी बताया। समिति ने पंचायतों को प्रभावशाली बनाने के लिए सुझाया कि पंचायतीराज को ग्राम स्वराज की अवधारणा से प्रेरणा लेनी चाहिए। स्वशासन की आधारभूत इकाई के रूप में स्वीकारते हुए समिति ने ग्राम सभाओं को लोकतांत्रिक देश के गणतंत्रात्मक आधार के रूप में प्रस्तुत किया। समिति ने सुझाव दिया कि स्थानीय स्वशासन को संविधान में संशोधन के जरिए संवैधानिक मान्यता, सुरक्षा एवं संरक्षा प्रदान की जानी चाहिए। पंचायतीराज के विशेष संदर्भ के साथ स्थानीय स्वशासन को संवैधानिक रूप से राजसत्ता का तृतीय स्तर घोषित किया

जाना चाहिए। पंचायतीराज की पहचान तथा मान्यता का हरण न हो सके, इसके लिए संविधान में पृथक अध्याय जोड़ा जाना चाहिए। समिति ने पंचायतों को प्रभावशाली बनाने के लिए मतदाताओं, निर्वाचित जन प्रतिनिधियों, प्रशासनिक अधिकारियों एवं स्वयं सेवी संस्थाओं के प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजन करने का भी सुझाव दिया।

आजादी के बाद नीति निर्माताओं में यह निर्विवाद रूप से सहमति थी कि भारत जैसे देश जिसकी तीन चौथाई से अधिक जनसंख्या गाँवों में बसती है का विकास ग्रामीण जनसंख्या के विकास को अनदेखा करके नहीं किया जा सकता। साथ ही, इस बात पर भी सहमति थी कि भारत जैसे विशाल तथा क्षेत्रीय विभिन्नताओं वाले देश में केन्द्रीकृत प्रशासन के द्वारा विकास की मुख्यधारा में सभी को जोड़ा जाना अत्यन्त कठिन है, इसलिए ग्राम स्तर तक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया को सुदृढ़ किया जाए। ग्राम स्वराज्य की इस परिकल्पना में राज्य का अन्त नहीं, बल्कि राज्य का विकेन्द्रीकरण होना था। यह कहा गया कि सच्चा लोकतंत्र केन्द्र में बैठे हुए बीस व्यक्तियों द्वारा नहीं चलाया जा सकता। उसे प्रत्येक गाँव के लोगों को नीचे से चलाना होगा। परन्तु स्वतंत्रोत्तर भारत में राजसत्ता के विकेन्द्रीकरण की जो प्रक्रिया व्यवहार में शुरू हुई वह देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था के आधार को व्यापक बनाने हेतु सहभागी लोकतंत्र के लिए आधारभूमि तैयार करने जैसे उद्देश्य से प्रेरित न होकर मूलतः उपर से लागू किये जाने वाले विकासात्मक कार्यक्रमों में सार्वजनिक सहयोग सुनिश्चित करने के नियत से चलाई गई। यह सीमित उद्देश्य पंचायतीराज के दार्शनिक मूलाधारों से मेल नहीं खाता था। केन्द्र या राज्य सरकारों ने वर्चस्व तथा श्रेष्ठता की स्थिति में हस्तक्षेप न करने देने तथा नीचे की संस्थाओं में हस्तक्षेप बनाए रखने के उद्देश्य से विकेन्द्रीकरण को कभी भी पूर्णता के साथ लागू नहीं किया।

वस्तुतः सीमित अर्थों में पंचायतीराज के लिए प्रयास तात्कालिक राजनैतिक लोकप्रियता की दृष्टि से काफी सुविधाजनक था, क्योंकि पंचायतों के लिए चुनाव अधिकार प्रतिनिधित्व नियोजन के जोड़े जाने, देख-रेख का दायित्व, वित्तीय एवं अन्य संसाधनों आदि की घोषणाओं को राष्ट्रव्यापी अथवा राजस्तरीय प्रचार मिलता था। इन घोषणाओं के माध्यम से पंचायतों को प्रभावशाली बनाकर सत्तासीन राजनैतिक दल आगामी चुनावों के लिए अपने आधार का विस्तार भी करते रहे। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि इन सबके बीच पंचायतीराज व्यवस्था दिनों-दिन मजबूत भी होती रही और अन्ततः 78वें संविधान संशोधन के जरिये उसे संवैधानिक सुरक्षा प्राप्त हो गयी। इस प्रकार जहाँ तक राजसत्ता के तीसरे स्तर के रूप में मान्यता प्राप्त होने का प्रश्न है विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया बलवती होती रही। यदि इस दिशा में आजादी के बाद के वर्षों में पंचायतीराज के क्षेत्र में प्रगति के आधार पर काल का विभाजन करने का प्रयास करें तो हम छः भागों में बाँट सकते हैं :-

उत्साह का काल	(1957-64)
ठहराव का काल	(1965-69)
गिरावट का काल	(1970-77)
पुनर्जीवन का काल	(1978-79)
पुनः गिरावट का काल	(1980-89)
नवीन उत्साह का काल	(1990 से आज तक)

73वाँ संविधान संशोधन एवं पंचायत संस्थाओं का स्वरूप

73वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा पंचायतीराज संस्थाओं को जिला स्तर से नीचे संवैधानिक तौर पर शासन के तीसरे स्तर के रूप में स्थापित किया गया है। संविधान में अंकित नीति निर्देशक सिद्धान्तों में जो स्वशासित ग्राम पंचायतों को स्थापित करने का उद्देश्य प्रतिपादित किया गया था, उस पर 45 वर्षों तक कोई कार्य नहीं हुआ था। इस भूल को अब सुधारा गया। इस संशोधन के अनुच्छेद 243(बी) के अनुसार राज्यों को न केवल गाँवों के लिए, परन्तु जिला स्तर तथा जिले और गाँवों के बीच के स्तरों के लिए भी एक स्वशासी संस्थाओं की तरह तीनों स्तर की पंचायतों का गठन करना वैधानिक अनिवार्यता बनाया गया। 20 लाख तक की जनसंख्या वाले छोटे राज्यों में ग्राम स्तर एवं जिला स्तर की पंचायतें गठित करना ही पर्याप्त माना। बीच के स्तर पर पंचायत गठन की अनिवार्यता नहीं रखी गयी।

अनुच्छेद 243(सी)(2) द्वारा तीनों स्तरों पर मतदाताओं द्वारा सीधे चुनाव कराना अनिवार्य किया गया। यह राज्यों की इच्छा पर छोड़ा गया कि ग्राम स्तर के पंचायतों के अध्यक्षों को खण्ड स्तर की पंचायतों में प्रतिनिधित्व दिया जाये या नहीं इसी प्रकार खण्ड स्तर की पंचायतों के अध्यक्षों को जिला स्तर की पंचायतों में प्रतिनिधित्व दिया जांच या नहीं। ग्राम पंचायत स्तर पर सरपंच का निर्वाचन सीधे जनता द्वारा हो या अन्यथा, यह भी राज्यों के विवेक पर छोड़ा गया।

अनुच्छेद 243(डी.) के अनुसार तीनों स्तर पर सदस्यों एवं अध्यक्षों के पदों पर जनसंख्या के अनुपात में अनुसूचित जाति एवं जनजाति हेतु आरक्षण अनिवार्य किया गया। प्रत्येक श्रेणी के पदों में एक तिहाई पद महिलाओं हेतु आरक्षित करना अनिवार्य है। अन्य पिछड़ी जातियों-हेतु आरक्षण तथा उसका प्रतिशत राज्यों के विवेक पर छोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 243(ई.) द्वारा 5 वर्ष या अनिवार्य कार्यकाल रखा गया। विघटन की स्थिति में 6 माह के अन्दर पुनः निर्वाचन अनिवार्य किया गया। समय पर निर्वाचन की जिम्मेदारी प्रत्येक राज्य में गठित राज्य निर्वाचन आयोग को सुपुर्द की गई।

73वें संविधान संशोधन द्वारा यद्यपि पंचायतीराज संस्थाओं को वैधानिक मान्यता मिली, जिसमें कमजोर वर्गों और महिलाओं के प्रतिनिधित्व को सुनिश्चित किया गया, परन्तु उनके कार्यों एवं शक्तियों के बारे में शिथिल प्रावधान अनुच्छेद 243(जी.) में कर दिया। इसके अनुसार राज्य विधान मण्डल पंचायतों को विधान द्वारा विभिन्न स्तरों पर ऐसी शक्तियों एवं अधिकार निर्धारित शर्तों के आधीन रहते हुए दे सकेगा। जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाई के रूप में कार्य करने हेतु आवश्यक हो। यह शक्तियां एवं दायित्व निम्न संबंध में होंगे।

- (क) आर्थिक विकास एवं सामाजिक न्याय हेतु योजना बनाना।
- (ख) ग्यारहवीं अनुसूची में वर्णित विषयों को शामिल करते हुए आर्थिक विकास एवं सामाजिक न्याय हेतु योजनाओं को क्रियान्वित।

243(एच.) के अनुसार पंचायतों को कर आदि लगाने की शक्ति भी दी जा सकेगी एवं अनुदान देय होगा। संसाधन बढ़ाने हेतु हर 5 वर्ष में राज्य वित्त आयोग का गठन करने की भी अनिवार्यता रखी गयी।

73वें संविधान संशोधन के प्रावधानों के अनुसरण उत्तर प्रदेश में भी अन्य राज्यों की भाँति 1994 में नये पंचायतीराज अधिनियम पारित किये गये। उत्तर प्रदेश के अधिनियमों में आवश्यक संशोधन करके तीनों स्तर की पंचायतों हेतु अलग-अलग अधिनियम बनाये गये और त्रिस्तरीय पंचायतें बनाने की संस्तुति की गयी।

ग्राम पंचायत	(ग्राम स्तर)
क्षेत्र पंचायत	(खण्ड स्तर)
जिला पंचायत	(जिला स्तर)

पंचायतीराज संस्थाओं के कार्य एवं शक्तियां

73वें संविधान संशोधन ने ग्यारहवीं अनुसूची बनाकर 29 विषय निर्धारित किये जो स्थानीय शासन हेतु पंचायतीराज संस्थाओं को देना उचित समझे। राज्य सरकारों से अपेक्षा की गयी कि ऐसे कार्य पंचायतों को सुपुर्द हो ताकि पंचायत आर्थिक विकास एवं सामाजिक न्याय के लिए योजना तैयार कर सकें और केन्द्रीय एवं राज्य स्तर की सरकारी विकास योजनाओं का क्रियान्वयन जन सहभागिता के आधार पर करवा सकें। यह तो कोई भी नहीं कह सकता कि आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय वांछित लक्ष्य नहीं हो सके, परन्तु इससे पंचायतीराज संस्थाएँ केवल सौंपे हुए कार्यक्रमों को क्रियान्वित करने वाली संस्थाएँ बनकर रह जाती हैं। स्वशासन का लक्ष्य कमजोर पड़ गया। लम्बे समय से आधारभूत प्रश्न चला आ रहा था कि क्या उनका कार्य केवल विकास कार्यों तक ही सीमित है अथवा स्व-शासन के व्यापक उद्देश्य की प्राप्ति के

लिए उन्हें कार्य करना है। संविधान की धारा 40 में ग्राम पंचायतों के लिए पूर्णरूप से स्वशासन की कल्पना की गयी थी। विकास की सीमित धारणा तो 1957 में बलवन्त राय मेहता की रिपोर्ट के साथ सामने आयी। 73वें संविधान संशोधन में भी राज्य सरकार की स्वतंत्र इच्छा पर छोड़ दिया कि वे पंचायतों को स्वशासन की विश्वसनीय संस्थाओं के रूप में कार्य करने के लिए क्या अधिकार और शक्तियां देने का निर्णय लेती है। 1993 एवं 1994 में संविधान संशोधन के बाद जो नये उपनियम बनें एवं संशोधन हुए, उनमें अधिकार एवं शक्तियों की सूची बनाते समय तो उदारता दिखाई गयी। जिसमें करीब-करीब सभी विषय जोड़ दिये गये जैसे-

1. अनिवार्य नागरिक कार्य- स्वच्छता, रोशनी, ग्रामीण सड़कें, पेयजल स्रोत, कुएं, तालाब, टंकी रख-रखाव, श्मशान घाट, कॉजी हाउस, जन्म-मृत्यु पंजीकरण।
2. सामान्य कार्य- योजना बनाना, बजट बनाना, आबादी एवं चारागाहों पर अतिक्रमण रोकना, प्राकृतिक प्रकोप में सहायता कार्य, मेले, उत्सव आयोजन।
3. विकास कार्य- कृषि, भूमि सुधार एवं मृदा संरक्षण, पशुपालन, डेयरी, लघु सिंचाई, मत्स्य पालन, वृक्षारोपण, ईंधन एवं चारा विकास, पेयजल, ग्रामीण आवास, गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम, रोजगार योजनाएं, प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा, वृद्धावस्था एवं विधवा विकलांग पेशन, चिकित्सालय, परिवार कल्याण, महिला एवं बाल विकास, सार्वजनिक वितरण प्रणाली, अनुसूचित जाति/जनजाति कल्याण कुटीर एवं गृह उद्योग।

संदर्भ ग्रंथ

- देसाई बसंत, (1990): पंचायती राज, पावर टू द पीपुल, हिमालया पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
- नारायण, इकबाल (1974): पंचायती राज एडमिनिस्ट्रेशन इन महाराष्ट्र, पापुलर प्रकाशन, बम्बई।
- भट्ट शर्मा, यू.के. (1995): न्यू पंचायती राज सिस्टम, प्रिन्टवेल, जयपुर।
- मुथैया, वी.सी. (1972): पंचायत टैक्सेस, नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ कम्युनिटी डेवलपमेंट, हैदराबाद।
- मेहता, आर.आर.एस. (1995): रूरल लीडरशिप एण्ड पंचायत, वाहरी पब्लिकेशन्स, प्रा. लि., बम्बई।
- राव, डी. वी. राघव (1980): पंचायत एण्ड रूरल डेवलपमेंट, आशीष पब्लिशर्स, जयपुर।
- शर्मा, रविन्द्र (1974): विलेज पंचायत इन राजस्थान, आलेख पब्लिशर्स जयपुर।
- शिविया एम. एवं अन्य (1976): पंचायती राज, नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ कम्युनिटी डेवलपमेंट, हैदराबाद।
- सिंह हरम्यान (1985): रूरल पोलिटीकल सिस्टम इन इण्डिया इन्दिरा पब्लिकेशन, दिल्ली।
- मिश्रा, स्वेता (1997): पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की सहभागिता, कुरुक्षेत्र, मई
- पंचायती राज अपडेट, सितम्बर 98, इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज, (1998)।
- असलम, एम.: 'पंचायती राज व्यवस्था, विकास के तरीके में बदलाव की जरूरत' कुरुक्षेत्र, अप्रैल।
- कुकरेजा, सुंदरलाल (1998): 'पंचायती राज व्यवस्था को मजबूत बनाने की आवश्यकता' कुरुक्षेत्र, अप्रैल।
- दुबे, दिवाकर (1997): 73 वें संविधान संशोधन से सत्ता का विकेंद्रीकरण कुरुक्षेत्र, मई।

महीपाल (1997): पंचायती राज व्यवस्था के चार वर्ष: एक मूल्यांकन, कुरुक्षेत्र, मई।

जनक पाण्डेय, सुनील सिंह एवं राजमणि त्रिपाठी, (1997): प्रदेश स्तरीय ग्राम पंचायत प्रतिनिधि प्रशिक्षण मूल्यांकन रिपोर्ट।

कोठारी रजनी (1961): 'पंचायती राज की असेसमेंट' इकानामिक एण्ड पालिटिकल वीकली, मई 13, पृष्ठ 757.

डॉ. एस. के. (1961): पंचायती राज ए सिन्थीसिस, पृष्ठ 91.

आशीर्वादम, एड्डी (1989) राजनीति विज्ञान, एस. चांद कम्पनी नई दिल्ली, पृष्ठ 664; उपर्युक्त पृष्ठ 664.

गांधी, एम. के. (1946): हरिजन, 29 जुलाई।

नेहरू, जवाहरलाल (1965): सामुदायिक विकास एवं पंचायत राज सत्ता साहित्य मंडल, पृष्ठ 29.

कौटिल्य, अर्थशास्त्र चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी, प्रथम अध्याय, 17 वां प्रकरण।

परमात्माशरण (1989): प्राचीन भारत में राजनीतिक विचार एवं संस्थाएं, मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ, पृष्ठ 452.

विद्यालंकार, सत्यकेतु (1928): मौर्य साम्राज्य का इतिहास, इण्डियन प्रेस इलाहाबाद, पृष्ठ 210.

सेसिल क्रोस (1922) द डेवलपमेंट ऑफ सेल्फ गवर्नमेंट इन इंडिया (1858-1914) शिकागो यूनिवर्सिटी प्रेस, शिकागो, पृष्ठ 21.

सामन्त, एस. वी. (1957): विलेज पंचायत लोकल सेल्फ गवर्नमेंट प्रेस, अंधेरी, पृष्ठ 15.

पाण्डे, राम (स.) (1989): पंचायती राज जयपुर पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर पृष्ठ 5 उपर्युक्त पृष्ठ 6.

सिवन्ना, एन. (1990): 'पंचायत राज रिफार्मस एण्ड रूरल डेवलपमेंट, चुघ पब्लिकेशन, इलाहाबाद, पृष्ठ 42.

शोध की समस्या और अध्ययन पद्धति

ग्राम्य विकास वास्तव में विकास योजनाओं की सफलता पर ही निर्भर करता है। यह एक अनुभूत तथ्य है कि देश में योजनाओं के सफल क्रियान्वयन हेतु महत्वपूर्ण प्रयास करने के बावजूद वांछित सफलता प्राप्त नहीं हो सकी। इकबाल नारायण (1987) ने इस तथ्य को स्वीकार किया है कि विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में सबसे बड़ी बाधा वांछित स्तर तक लोगों की सहभागिता सुनिश्चित न हो पाना है। उनके विचार में जन-सहभागिता विकास-कार्यक्रमों का मेरुदण्ड है। यतीश मिश्रा (1994) के अनुसार किसी भी योजना से अनुकूलतम परिणाम प्राप्त करने में लोगों की समर्पित भावना एवं सहभागिता की प्रमुख भूमिका होती है।

विकास कार्यक्रमों के सन्दर्भ में निर्णय लेने, उनके क्रियान्वयन, निर्देशन एवं मूल्यांकन में जन-सहभागिता अत्यधिक सहायक हो सकती है। जनतंत्रीय ग्रामीण व्यवस्था में सहभागिता एक सामान्य ग्रामवासी को भी अपने विचार देने एवं अपने प्रयासों को दिखाने का अवसर प्रदान करती है कि वह भी विकास कार्यक्रमों के नियोजन संगठन क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन के उत्तरदायित्व निर्वाह के योग्य है। जन-सहभागिता को सुनिश्चित करना ही नियोजन का प्रमुख उद्देश्य है, जिससे उपयुक्त तथा स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप विकास हो सके। विकेन्द्रीकरण की अवधारणा तभी अर्थपूर्ण हो सकती है जब नियोजन निम्नतम स्तर पर सहभागिता को स्वीकार करे तथा लोगों को अपने उत्तरदायित्व का अनुभव करने योग्य बनाये। जो विचार तथा सुझाव सामान्य तथा निम्नतम स्तर के व्यक्तियों से प्राप्त होते हैं वे अनुभूत एवं आवश्यकता आधारित होते हैं और उसी से नियोजकों के लिए अधिक व्यावहारिक व महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकते हैं, जिससे वे विकास की अधिक उपयुक्त व्यूह रचना तैयार कर सकें (एस.के. सिंह, 1993)।

विकास कार्यक्रमों में जन-सहभागिता के उपर्युक्त महत्व को दृष्टिगत रखते हुए ही संयुक्त राष्ट्र की आर्थिक एवं सामाजिक परिषद ने अपनी संस्तुति में कहा है कि सरकार को राष्ट्रीय विकास की व्यूह रचना में सहभागिता को एक आधारभूत नीति स्वीकार करना चाहिए तथा सभी व्यक्तियों एवं अशासकीय संगठनों को नीतियों के निर्धारण तथा योजनाओं के क्रियान्वयन में अधिकतम संभव सक्रिय सहभागिता हेतु प्रोत्साहित करना चाहिए (रिपोर्ट, सामाजिक विकास आयोग, 1975)। सम्भवतः, इसीलिए भारत की आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-97) में विकास को एक जन-आन्दोलन

बनाना आवश्यक समझा गया है। विकास की सम्पूर्ण प्रक्रिया में जनता की पहल तथा भागीदारी प्रमुख तत्व होने चाहिए (एस.के. सिंह, 1993)।

उक्त परिप्रेक्ष्य में आज आवश्यकता इस बात की है कि विभिन्न विकास योजनाएँ केवल लक्ष्य प्रधान न होकर व्यावहारिक हों तथा योजनाओं के क्रियान्वयन का दायित्व उन्हीं का हो जिनके लिए वे क्रियान्वित की गयी हैं। उसे संभव बनाने हेतु बलवंत ग्राय मेहता कमेटी (1957) ने अपने प्रतिवेदन में प्रबल संस्तुति की थी कि जन-सहयोग प्राप्त करने हेतु त्रिस्तरीय पंचायतराज व्यवस्था लागू करके स्थानीय एवं प्रभावी नेतृत्व का विकास किया जाय। संविधान का 73वाँ संशोधन इसी दिशा में किया गया एक महत्वपूर्ण प्रयास है। यही ग्राम स्तर का नेतृत्व विकास कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन का उत्तरदायित्व लेते हुए उनमें स्वयं भागीदार बनने के साथ-साथ सामान्य जनता की सहभागिता भी सुनिश्चित करेगा। उक्त सन्दर्भ में यहाँ पर कृषि विकास, स्वास्थ्य विकास एवं शिक्षा विकास कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता के स्तर को ज्ञात करने का प्रयत्न किया गया है, जिससे उपरोक्त विकास कार्यक्रमों की सफलता का वास्तविक मूल्यांकन किया जा सके।

अध्ययन का उद्देश्य

- पंचायत प्रतिनिधियों की सामाजिक-आर्थिक एवं राजनैतिक पृष्ठभूमि जैसे उनकी आयु, जाति, शिक्षा, व्यवसाय, पारिवारिक स्वरूप एवं राजनैतिक अभिरूचि आदि की जानकारी प्राप्त करना।
- कृषि विकास, स्वास्थ्य विकास एवं शिक्षा विकास के कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता के स्तर की जानकारी प्राप्त करना।

अध्ययन की कार्ययोजना

वर्तमान अध्ययन में तथ्यों का संकलन दो स्तरों पर किया गया है। प्राथमिक और द्वितीयक। द्वितीयक तथ्य के अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र के भौगोलिक, ऐतिहासिक, जनसंख्यात्मक और सामुदायिक जीवन से सम्बन्धित आंकड़े सम्मिलित हैं। इन आंकड़ों पंचायत, तहसील, प्रखण्ड, विकास कार्यालय, जिला पंचायत विभाग एवं पंचायती राज निदेशालय, उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद नगर में स्थित अन्य सम्बन्धित जिला-कार्यालयों जैसे जनगणना नियोजन आदि से प्राप्त किए गये।

प्राथमिक तथ्यों का संकलन अनुसंधानकर्ता द्वारा पूर्वनिर्मित साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से ग्राम पंचायतों में कार्यरत पंचायत प्रतिनिधियों के निवास स्थल पर व्यक्तिगत रूप से जाकर किया गया। लगभग 80 प्रश्नों वाली इस साक्षात्कार अनुसूची को चार खण्डों में विभाजित किया गया है। अनुसूची के प्रथम खण्ड में उत्तरदाता की

सामाजिक-आर्थिक स्थिति से सम्बन्धित प्रश्न है। द्वितीय खण्ड में कृषि के विकास से सम्बन्धित अनेक प्रश्नों का संकलन है। तृतीय एवं चतुर्थ खण्ड क्रमशः स्वास्थ्य विकास एवं शिक्षा विकास में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता से जुड़े अनेक प्रश्न सम्मिलित किये गये हैं। अनुसूची को तैयार करने के पश्चात अनुसंधानकर्ता ने कुछ ग्राम पंचायतों में जाकर उसका पूर्व निरीक्षण किया। पूर्व परीक्षण के द्वारा अनुसूची की त्रुटियों के निराकरण तथा उसकी बोधगम्यता की वृद्धि में सहयोग मिला। अनुसूची को अन्तिम स्वरूप प्रदान करने के पश्चात प्राथमिक आंकड़ों के संकलन का कार्य प्रारम्भ किया गया। यह कार्य 24 अप्रैल, 2005 से 31 मई 2005 के मध्य तक चलता रहा। इस अवधि में अनुसंधानकर्ता ने ग्राम पंचायत प्रतिनिधियों का साक्षात्कार किया। लगभग 110 उत्तरदाताओं से साक्षात्कार उनके निवास-स्थल पर किया गया। साक्षात्कार अनुसूची पूरित करने के साथ अनुसंधानकर्ता ने अपने अवलोकन (आवजरवेशन) के आधार पर विस्तृत (फील्ड नोट) क्षेत्र टिप्पणी तैयार किये हैं। व्यक्तिगत पारिवारिक और सामुदायिक जीवन से सम्बन्धित महत्वपूर्ण तथ्यों के सम्बन्ध में विस्तृत (केस) केस वितरण भी प्राप्त किये गये हैं। अवलोकन और केस विवरण के द्वारा प्राप्त तथ्यों का प्रयोग साक्षात्कार अनुसूची से संकलित तथ्यों की विस्तृत व्याख्या और स्पष्टीकरण के लिए यथा स्थान किया गया।

अध्ययन द्वारा संकलित तथ्यों के वर्गीकरण और सारणीयन का कार्य व्यक्तिगत रूप से अनुसंधानकर्ता द्वारा किया गया है। तथ्यों को उनकी समानता और विभिन्नता के आधार पर भिन्न-भिन्न वर्गों, अनुक्रमों और श्रेणियों में विभाजित करके सारणियां तैयार की गयी हैं। प्रत्येक सारणी में तथ्यों की आवृत्ति और साधारण प्रतिशत प्रदर्शित किया गया। आयु, शिक्षा, व्यवसाय, जाति, मासिक आय, परिवार का स्वरूप आदि को स्वतंत्र परिवर्त्य मानकर तथ्यों का सह-सम्बन्ध ज्ञात किया गया है। सम्बन्ध की परिशुद्धता जाँचने के लिए काई स्क्वायर टेस्ट का यथा-स्थान प्रयोग किया गया है। तथ्यों का विश्लेषण विवरणात्मक दृष्टिकोण से करके अध्ययन का निष्कर्ष प्राप्त किया गया।

साहित्य की समीक्षा

पंचायतीराज व्यवस्था से सम्बन्धित अनेक अध्ययन किये गये हैं। यहाँ ऐसे संदर्भित अध्ययनों की समीक्षा की गयी है, जो इस अध्ययन की दृष्टि से महत्वपूर्ण एवं प्रासंगिक हैं। इस समीक्षा में दो विषयों से सम्बद्ध अध्ययन लिए गये हैं जो कि पंचायतीराज व्यवस्था और ग्रामीण नेतृत्व से सम्बन्धित हैं।

एस.एस. ढिल्लन (1955) ने दक्षिण भारतीय ग्रामों में नेतृत्व एवं वर्ग सम्बन्धी अध्ययन किया। अपने अध्ययन के आधार पर उन्होंने स्पष्ट किया कि भारतीय ग्रामीण नेतृत्व के स्वरूप में मुख्य रूप से तीन तत्व प्रभावी होते हैं- प्रथम, परिवार का उच्च

सामाजिक स्तर, द्वितीय, परिवार का आर्थिक स्तर, एवं तृतीय, व्यक्तिगत व्यक्तित्व के लक्षण।

एम. वैक्टरमैय्या एवं जी. रामा रेडडी (1967) ने पंचायतराज का अध्ययन आन्ध्र प्रदेश के सन्दर्भ में किया है। अपने अध्ययन में उन्होंने आन्ध्र प्रदेश में पंचायतराज की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का वर्णन करते हुए इन संस्थाओं की बेहतरी के लिए गठित विभिन्न समितियों की अनुशंसाओं की विवेचना भी की है। इसके अतिरिक्त उन्होंने तत्कालीन समय में आन्ध्र प्रदेश में लागू पंचायतराज व्यवस्था की संरचना का चित्रण करते हुए इन संस्थाओं की वित्तीय प्रशासनिक एवं राजनीतिक समस्याओं का विश्लेषण भी किया गया।

बी.एस. भार्गव (1971) ने स्थानीय नेतृत्व सम्बन्धी अपने अध्ययन में स्पष्ट किया है कि पंचायत संस्थाओं के प्रमुख नेताओं एवं उच्च स्तर के नेतृत्व के बीच नए प्रकार के राजनीतिक सम्बन्ध विकसित हुए हैं, जिसके तहत पंचायत स्तर का नेतृत्व उच्च स्तर के नेतृत्व के लिए और बैंक के रूप में उपयोगी सिद्ध हुआ है एवं इस प्रकार से सौदेबाजी की एक नही राजनीति का प्रचलन हुआ है।

डी.एस. चौधरी (1981) ने अपने अध्ययन में उभरते ग्रामीण नेतृत्व को स्पष्ट किया है। यह अध्ययन सर्वेक्षण से एकत्रित प्राथमिक तथ्यों के विश्लेषण पर आधारित है। इस अध्ययन से ग्रामीण क्षेत्रों पर स्थानीय स्वशासन में ग्रामीण नेतृत्व की पृष्ठभूमि एवं उनकी कार्य प्रणाली को समझने हेतु उचित दिशा मिलती है।

शकुन्तला शर्मा (1994) ने अपनी पुस्तक में स्थानीय राजनीति एवं पंचायतराज का बृहद विवेचन प्रस्तुत किया है। इस पुस्तक में पंचायतराज व्यवस्था के विकास के साथ पंचायत नेतृत्व का पंचायत चुनाव एवं मतदान व्यवहार के सन्दर्भ में विश्लेषण किया गया, जिसमें जाति, वर्ग एवं शक्ति जैसे कारकों की भूमिका को स्पष्ट किया गया है। ग्रामीण नेतृत्व की रूपरेखा के साथ ग्रामीण शक्ति संरचना का विवरण विशेष महत्व के साथ अध्ययन में समाहित किया गया है।

जी.डी. भट्ट (1994) ने पिथौरागढ़ (उत्तरांचल) जिले में त्रिस्तरीय पंचायतराज व्यवस्था से- उभरे ग्रामीण नेतृत्व की व्याख्या की है। इस अध्ययन के निष्कर्ष पर यह स्पष्ट करते हैं कि ग्रामीण परम्परागत राजनीतिक अभिजन वर्ग की जगह नया नेतृत्व आया है, जिसका जाति एवं समुदाय के संदर्भ में व्यापक प्रतिनिधित्व है।

जार्ज मैथ्यू (1994) ने अपने अध्ययन "पंचायतीराज व्यवस्थापन से आन्दोलन की ओर" में विस्तृत रूप से कर्नाटक, उड़ीसा एवं पश्चिमी बंगाल में प्रचलित स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था को विश्लेषित किया है। अपने अध्ययन के माध्यम से उन्होंने इस बात को भी स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि न्यायपालिका भी प्रशासन की

इस इकाई को मजबूत करने में रचनात्मक भूमिका का निर्वहन कर सकती है। साथ ही साथ उन्होंने पंचायत व्यवस्था के संरचनात्मक ढाँचे को अधिक प्रभावशाली बनाने का सुझाव दिया है। पंचायतों के नियमित निर्वाचनों को “संस्थात्मक शान्तिपूर्ण क्रान्ति” की संज्ञा देते हुए उन्होंने इसे लोकतांत्रिक व्यवस्था में जन-सहभागिता एवं राजनीतिक जागरूकता के सुनिश्चय के लिए अनिवार्य माना है।

बी.एम. वर्मा (1994) ने जन-कल्याणकारी समाज में ग्रामीण नेतृत्व पर अध्ययन किया है। यह अध्ययन सामाजिक स्थिति एवं भूमिका प्रदर्शन पर केन्द्रित है। इस अध्ययन में पंचायतराज नेतृत्व के कार्य, व्यवहार को उसकी सामाजिक-राजनीतिक पृष्ठभूमि में विश्लेषित किया गया है।

गिरीश कुमार एवं बुद्धदेव घोष (1996) ने पश्चिमी बंगाल में सम्पन्न हुए मई 1993 के पंचायत चुनावों का सूक्ष्म अध्ययन किया है। इस अध्ययन में चुनावों में सहभागिता एवं पंचायतराज संस्थाओं की कार्य प्रणाली जैसे दोनों महत्वपूर्ण पक्षों को समाहित किया गया है।

महीपाल (1997) ने अपने अध्ययन में पंचायतीराज व्यवस्था में अतीत से लेकर आज तक जो बदलाव आये हैं उनका क्रमबद्ध एवं संक्षिप्त विवेचना करते हुए वर्तमान व्यवस्था का विस्तार से वर्णन किया गया है, साथ ही देश के 15 राज्यों के अधिनियमों की मुख्य विशेषताओं को रेखांकित किया है।

अशोक वाजपेयी (1997) ने पंचायत राज एवं ग्रामीण विकास पर केन्द्रित अपने अध्ययन में भारत में पंचायतराज व्यवस्था के विभिन्न पहलुओं पर अध्ययन के साथ ही पाकिस्तान, बंगलादेश, श्रीलंका, चीन, ताइवान, दक्षिण कोरिया एवं जापान आदि देशों की स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं के संस्थागत स्वरूप को विश्लेषित किया है।

एम.आर. बीजू (1997) ने केरल राज्य के संदर्भ में नवीन पंचायतराज व्यवस्था का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है। अपने अध्ययन में केरल में पंचायतराज व्यवस्था के क्रियान्वयन, वित्तीय प्रबन्ध, शक्ति हस्तान्तरण एवं लोगों की सहभागिता आदि बिन्दुओं को स्पष्ट किया गया है। उनके अनुसार पंचायतराज व्यवस्था से किस प्रकार की अपेक्षा की गयी थी उसे पूरा करने में वह पूरी तरह सफल नहीं हुई है, किन्तु उसे असफल भी नहीं कहा जा सकता है। पंचायतराज व्यवस्था वास्तव में लोकतांत्रिकरण की प्रक्रिया की दिशा में एक कदम है।

आर.पी. जोशी (1997) द्वारा सम्पादित पुस्तक “पंचायतों का संवैधानिकरण” में पंचायत राज से सम्बन्धित विभिन्न साविधिक प्रावधानों को विश्लेषित किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में पंचायतराज के कानूनी एवं संवैधानिक पक्ष, पंचायतराज एवं आरक्षण

नीति, राज्यों की शक्ति, महिला भागीदारी, राज्य वित्त आयोग आदि से सम्बन्धित विषयों एवं समस्याओं को राजस्थान के विशेष सन्दर्भ में स्पष्ट किया है। अध्ययन के माध्यम से यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि पंचायतराज संस्थाओं के संवैधानिकरण द्वारा इसको पुनर्स्थापित किया गया है और इसे राजनीतिक व्यवस्था में वैधता प्राप्त हुई है, किन्तु इन संस्थाओं में संविधान की मंशानुरूप वित्तीय एवं प्रशासनिक शक्तियों के हस्तान्तरण में तेजी नहीं लाई जा सकी है।

यतीन्द्र सिंह (1998) ने मध्य प्रदेश में पंचायतराज व्यवस्था पर एक अध्ययन किया है। इस अध्ययन में मध्यप्रदेश की पंचायतराज व्यवस्था के विविध पक्षों से सम्बन्धित समस्याओं को स्पष्ट करते हुए उनकी सम्भावनाओं को क्रमवार विश्लेषित किया है।

उपर्युक्त समीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण एवं पंचायतराज पर सम्पन्न अध्ययनों में अधिसंख्यक अध्ययन 73वें संविधान संशोधन अधिनियम के पूर्व की स्थिति से सम्बन्धित है। पंचायतीराज व्यवस्था से संदर्भित सूक्ष्म एवं इन्द्रियानुभाविक अध्ययनों का स्पष्ट अभाव है। पंचायत प्रतिनिधियों से ग्रामीण विकास के विभिन्न क्षेत्रों में किये गये कार्यों एवं उनकी उपलब्धियों से सम्बन्धित किये गये इस सूक्ष्म एवं इन्द्रियानुभाविक अध्ययन की कई दृष्टियों से प्रासंगिकता है।

अध्ययन का समग्र औऱ निदर्श

समाज वैज्ञानिक अध्ययन की एक प्रमुख समस्या अध्ययन के समग्र का चयन है। प्रायः अध्ययन के समग्र का चयन करते समय अध्ययन के लक्ष्य और अध्ययन की व्यावहारिकता तथा समभाव्यता को वरीयता प्रदान की जाती है। वर्तमान अध्ययन का उद्देश्य ग्रामीण विकास में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता के स्तर को जांचना है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए होलागढ़ विकासखण्ड की कुछ ग्राम पंचायतों को चुना जाना आवश्यक है, जहाँ पंचायत प्रतिनिधियों द्वारा विशेषकर कृषि विकास, स्वास्थ्य विकास एवं शिक्षा विकास के कार्यों में अधिक से अधिक योगदान की सम्भावना उपस्थित हो। इस मापदण्ड (मानक) को ध्यान में रखकर वर्तमान अध्ययन के निमित्त इलाहाबाद जनपद के विकास खण्ड होलागढ़ की 12 ग्राम पंचायतों (बरई, हरख, हंसराजपुर, कस्तूरीपुर, पश्चिमनारा, साँगीपुर, हरीडीह, मैरी, बेराँवा, निकदिलपुर, राजगढ़, अरूआँव तथा उमरिया बादल) का चयन किया गया है।

स्थिति एवं विस्तार

होलागढ़ विकास खण्ड, इलाहाबाद नगर से लगभग 29 किलोमीटर उत्तर पश्चिम में स्थित है। भौगोलिक दृष्टि से इसकी स्थिति 25°15'30" से 25°30' अक्षांश तथा 81°40' पू० से 81°50' पू० देशान्तर के मध्य 148.1 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर

अवस्थित है। होलागढ़ विकास खण्ड तहसील सोरोंव के पश्चिम छोर पर स्थित है, जिसके उत्तर पश्चिम में जिला प्रतापगढ़, दक्षिण में कौड़िहार विकासखण्ड तथा पूर्व में मऊआइमा विकासखण्ड का विस्तार है।

इस विकासखण्ड के अन्तर्गत आने वाली भूमि सामान्यतः समतल है। उत्तर और पश्चिमी भाग में सिल्टी लोम (Silty Loam) प्रकार की मिट्टी पाई जाती है, जो खेती के लिए बहुत उपयुक्त नहीं मानी जाती। इस मिट्टी में केवल धान की फसल उगाई जाती है। क्षेत्र के दक्षिणी भाग में क्ले लोम (Clay Loam) पाई जाती है। क्ले लोम मिट्टी कृषि के लिए विशेषकर सब्जी की खेती के लिए अधिक उपयोगी है। यह कारण है कि इस क्षेत्र में सब्जी का उत्पादन प्रचुरता से किया जाता है। भूमि समतल होने के कारण क्षेत्र में नहरों का जाल बिछा है। मुख्य नहर शारदा कनाल तथा उसकी अनेक सहायक नहरें हैं, जो सिचाई हेतु वर्ष भर जल की सुविधा प्रदान करती हैं।

जलवायु

इस क्षेत्र की जलवायु मानसूनी है। चूंकि इस क्षेत्र की जलवायु के सम्बन्ध में कोई प्रमाणित आंकड़ा उपलब्ध नहीं है। अतः इलाहाबाद की जलवायु सम्बन्धी आंकड़ों का उपयोग इस क्षेत्र के लिए किया जा सकता है। इलाहाबाद का तापमान नवम्बर के मध्य तेजी से गिरने लगता है और जनवरी माह में अधिकतम दैनिक तापान्तर 23.7 से0ग्रे0 तक पहुँच जाता है, परन्तु औसत वार्षिक तापक्रम में अत्यधिक अन्तर पाया जाता है। जनवरी माह में तापक्रम अत्यन्त निम्न पहुँच जाता है, जबकि इसका औसत 16.5 से0ग्रे0 होता है और मई जून मास में इसका उच्चतम औसत 33.5 से0ग्रे0 पहुँच जाता है। गर्मी के महीनों में विशेषकर मई और जून के महीने में सूर्य की धूप और गर्मी असह्य होती है।

दिसम्बर और जनवरी के महीने में हवा का दबाव सबसे अधिक (लगभग 101.1 मी0 बार) हो जाता है, जबकि जून के महीने में यह दबाव सबसे कम (998.05 मि0 बार) हो जाता है।

इस क्षेत्र में वर्षा ऋतु जून महीने से प्रारम्भ होकर अक्टूबर मास तक चलती रहती है, किन्तु जुलाई और अगस्त अधिकतम वर्षा का महीना होता है। औसतन वर्ष में 102.6 से0मी0 वर्षा होती है जिसका 85 प्रतिशत अंश जून से लेकर सितम्बर मास के बीच में ही होती है। नवम्बर से लेकर मई तक की अवधि में 20 से0मी0 से भी कम वर्षा होती है। फरवरी, मार्च और अप्रैल महीनों की वर्षा बहुधा तेज हवा और ओलों के साथ होती है, जिसके कारण तैयार फसलों को प्रायः काफी नुकसान पहुँचता है।

जलवायु सम्बन्धी इन विशिष्टताओं के आधार पर अध्ययन क्षेत्र के मौसम को मुख्य रूप से तीन भागों में बाटा गया है। (1) शीत ऋतु यह नवम्बर से प्रारम्भ होकर मार्च तक चलता है। (2) ग्रीष्म ऋतु यह मार्च से प्रारम्भ होकर जून तक चलता है। (3) वर्षा ऋतु यह जून से प्रारम्भ होकर सितम्बर तक रहती है। अक्टूबर मास बिल्कुल संक्रमणकालीन होता है, जिससे वर्षा अत्यन्त अल्प होती है।

जनसंख्या

होलागढ़ विकास खण्ड की जनसंख्यात्मक विशेषताओं का अध्ययन महत्वपूर्ण तथ्यों पर प्रकाश डालता है। 1991 की जनगणना के अनुसार इस विकास खण्ड की कुल जनसंख्या 125334 थी, जिसमें 64389 पुरुष तथा 60945 महिलाएं थी। विकास खण्ड का जनसंख्या घनत्व 846 व्यक्ति प्रति कि०मी० था। विकास खण्ड स्तर पर क्षेत्रफल, जनसंख्या का घनत्व ग्राम पंचायतों की संख्या तथा आवासीय गाँवों की संख्या निम्न सारणी में प्रदर्शित है।

क्षेत्रफल	148.1 वर्ग कि०मी०
कुल जनसंख्या	125334
पुरुष	64389
स्त्री	60945
जनसंख्या	846
न्याय पंचायतों की संख्या	11
ग्राम पंचायतों की संख्या	11
आवासीय गाँवों की संख्या	90
सर्वेक्षित ग्राम पंचायतों की संख्या	11

सार्वजनिक सुविधाएं

किसी भी निवास क्षेत्र के लिए सड़क, बिजली और पानी की सुविधा आदि अनिवार्य आवश्यकता है जो मानव जीवन को समृद्धशाली और सुखमय बनाती है। इनके द्वारा न केवल जीवन सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, अपितु ये आर्थिक और व्यवसायिक संरचना की आधार भी होती है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए सार्वजनिक सुविधाओं का अध्ययन आवश्यक सा लगता है।

सड़क

होलागढ़ विकास खण्ड में उपयोगी और उच्च कोटि के यातायात मार्गों की सुविधा का अभाव है। यद्यपि गाँव की आबादी वाले क्षेत्र में कुछ पक्के कच्चे पगडंडिया एक-दूसरे से सम्बद्ध है, परन्तु नगर की ओर जाने वाले या नगर से

विकास खण्ड मुख्यालय की ओर आने वाली पक्की सड़क से ही क्षेत्र के विकास के लिए सबसे बड़ी सुविधा है। इलाहाबाद नगर से फैजाबाद की ओर जाने वाली मुख्य सड़क से जुड़ी यह सड़क सोरांव से पश्चिम होलागढ़ विकास खण्ड से होती हुई गाँवों में प्रवेश कर जाती है। इसी से अनेक कच्ची व पक्की सड़कें जिस पर आवागमन के प्रचुर साधन उपलब्ध हैं, विकास खण्ड को मुख्य सड़क से जोड़ती हैं। इस विकास खण्ड में नहरों का जाल बिछा है जिससे खेती की सिंचाई के लिए जल तथा आवागमन के लिए सड़कों के रूप में उपयोग में लायी जाती है। कहीं-कहीं नहर की पटरियाँ पक्की हैं जिस पर सुगमता से आवागमन के साधन चलते हैं। वर्षा के दिनों में कच्ची सड़कों का उपयोग भारी गाड़ियों के लिए नहीं किया जाता, बल्कि गाँव के अन्दर यदा-कदा बैलगाड़ियों और हल्के वाहनों के द्वारा ईट, खाद, सब्जी तथा अन्य कृषि पदार्थ लाने ले जाने के लिए किया जाता है।

जल

सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में पीने योग्य जल के तीन स्रोत हैं- बिजली से चलने वाले जल पम्प, कुएं और हैंडपम्प। नगर और तालाब का प्रयोग पशुओं के नहलाने, उनके पीने के पानी तथा सिंचाई के लिए किया जाता है। इस क्षेत्र के पीने का पानी हल्का है। जल पम्प अपेक्षाकृत सम्पन्न घरों के लोगों के पास है जिसके पानी का प्रयोग सिंचाई और घरेलू दोनों कार्यों के लिए किया जाता है।

यातायात

गाँव के निकटवर्ती मुख्य मार्ग से प्रतिदिन नगर की ओर से आने और जाने वाली अनेक निजी बस तथा तिपहिया सेवाएं उपलब्ध हैं, जिसके द्वारा ग्राम निवासी दूसरे स्थानों से सम्पर्क स्थापित करते हैं। गाँव के अधिकांश लोग मोटर साइकिल अथवा साइकिल द्वारा नगरीय क्षेत्र में आते जाते हैं। कुछ सम्पन्न परिवार के लोग अपनी निजी कारों का प्रयोग करते हैं।

कृषि

इस विकास खण्ड के अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार खेती है। अध्ययन क्षेत्र की लगभग 82 प्रतिशत जनसंख्या खेती पर आश्रित है। कृषक और खेतिहर मजदूरों की संख्या 35526 थी। मुख्य फसलें धान, गेहूँ, बाजरा, ज्वार तथा आलू हैं। यह एक सब्जी उत्पादक क्षेत्र होने के नाते सब्जी के व्यापार में अग्रणी है। सिंचाई के साधनों की उपलब्धता काफी होने के कारण कृषि सघनता भी अधिक है। नगर, कुएं तथा सरकारी व निजी ट्यूबवैल्स के द्वारा खेती की सिंचाई हेतु पर्याप्त जल भी उपलब्ध हो जाता है। व्यापार की दृष्टि से इस विकास खण्ड के समीप दहियाँवा की बड़ी मण्डी

है, जिसमें सप्ताह के दो दिनों सोमवार तथा शुक्रवार को बाजार लगता है, जिसमें लोगों की आवश्यकता की वस्तुएं उपलब्ध हो जाती हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. यतीश मिश्र (1994): प्यूपिल्स पार्टीसिपेशन इन प्रोडक्शन प्रोसेस अण्डर वाटर सेड, कुरुक्षेत्र, वा0 42 सं0.11.
2. इकबाल नारायण (1987): "रिवाइवल आफ पंचायतीराज", आई0सी0एस0एस0आर0, न्यूज लेटर, वा-18 (2), नई दिल्ली।
3. श्री बल्लभ शरण (1998): 'पंचायतों में महिलाएं : जरूरत है सक्रिय भूमिका की', कुरुक्षेत्र, पृ0 23.
4. एस.एस. ढिल्लन (1955): लीडरशिप एण्ड ग्रुप्स इन साउथ इण्डिया विलेज, प्रोग्राम इवेल्यूएशन आर्गेनाइजेशन, प्लानिंग कमीशन, नई दिल्ली।
5. एस. वेंकेटरंगैया एवं जी. राम रेड्डी (1967): पंचायत राज इन आन्ध्र प्रदेश, स्टेट चैम्बर आफ पंचायतराज, हैदराबाद।
6. बी.एस. भार्गव (1979): पंचायत राज सिस्टम एण्ड पॉलिटिकल पार्टीज, आशीष पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
7. डी.एस. चौधरी (1981): इमर्जिंग रूरल लीडरशिप इन इण्डियन स्टेट्स, मंथन पब्लिकेशनस, नई दिल्ली।
8. बी.पी.एस. भदौरिया एवं बी.के. दुबे (1989): पंचायतराज एण्ड रूरल डेवलपमेन्ट, कामनवेल्थ पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
9. सुशीला कौशिक (1993): वुमन्स एण्ड पंचायतीराज, हर-आनन्द पब्लिकेशनस, नई दिल्ली।
10. प्रेम लता पुजारी एवं विजय कुमार कौशिक (1994): वुमन पावर इन इण्डिया, कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
11. शकुन्तला शर्मा (1994): ग्रासरूट पालिटिक्स एण्ड पंचायतराज, दीप एण्ड दीप पब्लिकेशनस, नई दिल्ली।

12. जी.डी. भट्ट (1964): इमर्जिंग लीडरशिप पैटर्न इन रूरल इण्डिया, एम.डी. पब्लिकेशनस, नई दिल्ली।
13. मंजू जैन (1994): कार्यशील महिलाएं एवं सामाजिक परिवर्तन, प्रिन्टवैल, जयपुर।
14. जार्ज मैथ्यू, पंचायतराज फ्राम लेजिस्लेशन टू मूवमेन्ट कन्सेप्ट पब्लिशिंग, नई दिल्ली।
15. बी.एम. वर्मा (1994): रूरल लीडरशिप इन ए वेलफेयर सोसाइटी, मित्तल पब्लिकेशंस, नई दिल्ली।
16. पी.जी. जोगदण्ड (स०) (1995): दलित वुमन, इश्यूज एण्ड परस्पेक्टिव, ज्ञान पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
17. एम.ए. उम्मन एवं अभिजीत दत्ता (1995): पंचायतराज एण्ड देयर फाइनैन्स, कन्सेप्ट पब्लिशिंग, नई दिल्ली।
18. प्रभा आम्टे (1996): भारतीय समाज में नारी, क्लासिक पब्लिशिंग हाउस, जयपुर।
19. गिरीश कुमार एवं बुद्धदेव घोष (1996): वेस्ट बंगाल पंचायत इलेक्शन 1993-ए स्टडी इन पार्टिसिपेशन, कनसेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली।
20. सम्पा गुहा (1996): पोलिटिकल पार्टिसिपेशन ऑफ वुमेन इन ए चेजिंग सोसाइटी, इण्टर इण्डिया पब्लिकेशंस, नई दिल्ली।
21. राजेन्द्र कुमार सिंह (1996): ग्रामीण राजनीतिक अभिजन, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली।
22. यतीन्द्र सिंह सिसोदिया (1996): मध्य प्रदेश पंचायतराज अधिनियम 1993, एक अध्ययन मध्य प्रदेश सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान, उज्जैन (म०प्र०)।
23. के.सी. विद्या (1997): पोलिटिकल इम्पावरमेन्ट ऑफ वुमन एट द ग्रासरूट्स, कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
24. जी०के० घोष एवं शुक्ला घोष (1997): दलित वुमन ए.बी.एच. पब्लिशिंग कारपोरेशन, नई दिल्ली।

25. महीपाल (1997) पंचायतें- अतीत, वर्तमान एवं भविष्य, सारांश प्रकाशन, नई दिल्ली।
26. सुन्दर लाल कुकुरेजा (1998): पंचायतराज व्यवस्था को मजबूत बनाने की आवश्यकता, कुरुक्षेत्र, पृ० 28.
27. एस.कै. सिंह (1993): बिल्डिंग ऑप प्यूपिल्स इन्स्टीट्यूशन, योजना, फरवरी 14-28.

पंचायत प्रतिनिधियों की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि

समाजशास्त्रीय अध्ययन की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता अध्ययन से संबंधित उत्तरदाताओं (पंचायत प्रतिनिधियों) के सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि से संबंधित विशेषताओं का ज्ञान है। समाजशास्त्रीय अध्ययन सामाजिक सांस्कृतिक प्रक्रियाओं, मनोवृत्तियों और व्यवहार के प्रतिमानों के संदर्भ में जो प्राथमिक तथा प्राप्त करता है उनका विश्लेषण भली-भांति तभी किया जा सकता है, जब अध्ययन में उत्तरदाताओं के सामान्य विशेषताओं का भली-भांति ज्ञान हो। व्यक्ति की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि का उसके दृष्टिकोणों और मनोभावों पर प्रभाव पड़ता है। लिंग, आयु सम्बन्धी विभिन्नता, वर्गीय स्थिति में अन्तर, शैक्षणिक उपलब्धि में पायी जाने वाली विभिन्नता व्यक्ति की मनोवृत्तियों और दृष्टिकोणों को महत्वपूर्ण ढंग से प्रभावित करती है। अतः सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि का अध्ययन एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। अनेक समाजशास्त्रियों ने अपने अध्ययन द्वारा इस बात की पुष्टि की है कि उत्तरदाताओं की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि का अध्ययन किये बिना अध्ययन को तथ्यपरक और अपने में पूर्ण नहीं कहा जा सकता।

वर्तमान अध्ययन में सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि का विश्लेषण और भी आवश्यक है, क्योंकि ग्रामीण संरचना में पंचायत प्रतिनिधियों की समान विशेषताओं का अध्ययन तब तक भली-भांति संभव नहीं हो सकता, जब तक ग्रामीण परिवेश और आर्थिक जीवन के सम्बन्ध में पर्याप्त जानकारी उपलब्ध न हो जाय। इस तथ्य के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत अध्ययन में उत्तरदाताओं की आयु, शिक्षा, जाति, व्यवसाय, आय इत्यादि से सम्बन्धित तथ्यों का विश्लेषण किया गया।

आयु विभेद

आयु सामाजिक स्थिति का एक महत्वपूर्ण निर्धारक है। व्यक्ति की आयु उसकी शारीरिक और बौद्धिक परिपक्वता तथा सांसारिक अनुभवों को ही नहीं व्यक्त करती, अपितु इसके द्वारा उसकी विशिष्ट सामाजिक स्थिति, सम्मान, शक्ति, सुविधा और प्रभाव का भी निर्धारण होता है। परम्परागत समाज में आयु के आधार पर सामाजिक स्थिति का विभेदीकरण अत्यधिक कठोरता के साथ किया जाता रहा है। आदिम और परम्परागत समाज में वृद्ध व्यक्ति को सर्वाधिक सम्मान दिया जाता रहा है। पारिवारिक, सामाजिक और आर्थिक जीवन का प्रत्येक पक्ष इन्हीं वृद्ध और अनुभवी व्यक्तियों के हाथ में है। परम्परागत भारतीय ग्रामीण समाज में भी वृद्ध व्यक्ति का ही महत्वपूर्ण

स्थान रहा है। संयुक्त परिवार व्यवस्था और ग्राम पंचायत, ग्रामीण सामाजिक संरचना के तीन महत्वपूर्ण आधार रहे हैं। इन तीनों ही संस्थाओं में वृद्ध और अनुभवी व्यक्ति को श्रेष्ठ स्थान प्राप्त रहा है, यद्यपि आधुनिक भारतीय समाज में सामाजिक स्थिति के अन्य निर्धारकों में अपेक्षाकृत अधिक महत्व प्राप्त कर लिया है, तथापि आयु अब भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है। व्यक्ति की आयु उसके सामाजिक अनुभव, योग्यता, कुशलता, शक्ति और प्रभाव को प्रतिबिम्बित करती है।

इस अध्ययन में आयु के आधार पर उत्तरदाताओं (पंचायत प्रतिनिधियों) का वर्गीकरण तीन वर्गों में किया गया है। प्रथम, युवा आयु समूह- इसके अन्तर्गत ऐसे पंचायत प्रतिनिधियों का संग्रह किया गया है, जिनकी आयु 21 वर्ष से लेकर 35 वर्ष के अन्तर्गत है। ऐसे पंचायत प्रतिनिधि युवा पीढ़ी के सदस्य हैं। आयु के अनुरूप इन पंचायत प्रतिनिधियों में अपेक्षाकृत अधिक शक्ति, साहस, स्फूर्ति एवं लालसा की अपेक्षा की जाती है। इस आयु समूह के सदस्य अपने पारिवारिक और सामाजिक उत्तरदायित्व वहन के प्रारंभिक चरण में हैं, क्योंकि उन्होंने जीवन की वास्तविकताओं के साथ अभी प्रारंभिक परिचय ही प्राप्त किया।

द्वितीय मध्यम आयु समूह- इस आयु समूह के अन्तर्गत 36 वर्ष से लेकर 50 वर्ष तक के पंचायत प्रतिनिधियों को सम्मिलित किया गया है। ये उत्तरदाता शारीरिक और बौद्धिक परिपक्वता प्राप्त कर चुके हैं तथा युवा पीढ़ी की तुलना में इनका सामाजिक पारिवारिक अनुभव तथा उत्तरदायित्व की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक है।

तृतीय आयु समूह- इस आयु समूह के अन्तर्गत 50 वर्ष से अधिक के पंचायत प्रतिनिधि सम्मिलित किए गये हैं। ये वृद्ध पीढ़ी के पंचायत सदस्य हैं। शारीरिक दृष्टि से इनके शक्ति और स्फूर्ति का निरन्तर ह्रास होता जा रहा है; परन्तु सामाजिक अनुभव और मानसिक परिपक्वता की दृष्टि से इस पीढ़ी के सदस्यों का स्थान अत्यन्त उच्च है। जीवन की सुखद और दुःखद परिस्थितियों का सामना करते हुए तथा विभिन्न व्यक्तिगत पारिवारिक और सामुदायिक उत्तरदायित्वों का वहन करके इस पीढ़ी के सदस्यों ने जो अनुभव और ज्ञान प्राप्त किया है, वही इस पीढ़ी के सदस्यों की विशिष्ट पूंजी है।

आयु का उक्त विभाजन समाजशास्त्रीय अध्ययन के दृष्टिकोण से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। युवा, मध्यम और वृद्ध आयु समूह के पंचायत सदस्य तीन पृथक मनोवृत्तियों, दृष्टिकोणों और व्यवहार प्रतिमान का प्रतिनिधित्व करते हैं। अतः इन तीन आयु समूहों के दृष्टिकोणों का तुलनात्मक अध्ययन काल-क्रम के परिप्रेक्ष्य में परिवर्तनशील मनोवृत्तियों के अध्ययन के लिए अत्यन्त उपयोगी है। समाजशास्त्रीय अध्ययन की एक प्रमुख त्रुटि घटनाओं का ऐतिहासिक क्रम में अध्ययन न किया जाना है। आयु विभेद के आधार पर किया जाने वाला अध्ययन कुछ सीमा तक इस त्रुटि

का निराकरण करता है। युवा और वृद्ध पीढ़ी के तुलनात्मक अध्ययन के द्वारा समय क्रम में होने वाले परिवर्तनों का पता लगाया जा सकता है।

सारणी-3.1

आयु के आधार पर पंचायत प्रतिनिधियों का विभाजन

आयु समूह	संख्या	प्रतिशत
21-35 वर्ष (युवा आयु समूह)	35	32.71
36-50 वर्ष (मध्यम आयु समूह)	57	53.27
50 वर्ष से अधिक (वृद्ध आयु समूह)	15	14.01
योग	107	100.00

सारणी 3.1 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि वर्तमान अध्ययन के निर्देश में अधिकांश पंचायत प्रतिनिधि युवा और मध्यम आयु समूह के सदस्य हैं। अध्ययन में सम्मिलित 32.71 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि 21-35 वर्ष आयु समूह से सम्बद्ध हैं जबकि 53.27 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि 36-50 वर्ष के मध्यम आयु समूह के अन्तर्गत सम्मिलित हैं। केवल 14.01 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि 50 वर्ष से अधिक की आयु के हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि लगभग तीन चौथाई से अधिक पंचायत प्रतिनिधि युवा व मध्यम पीढ़ी के सदस्य हैं। अध्ययन से ये भी तथ्य संज्ञान में आये हैं कि ग्रामीण राजनीति में आरक्षण के तहत वृद्ध जनों की अपेक्षा युवा वर्ग में विशेष रूप से चेतना जगी है जिसके परिणाम स्वरूप वर्तमान पंचायत संस्थाओं में युवा आयु समूह के सदस्यों की सहभागिता अधिक देखी गयी।

जातिगत संस्तरण

जातिगत संस्तरण भारतीय संरचना का एक महत्वपूर्ण आधार है। प्रत्येक गांव के अन्तर्गत उच्च और निम्न जातियों का एक निश्चित संस्तरण पाया जाता है। एक ओर उच्च जातियां होती हैं, जिनका भूमि पर स्वामित्व होता है तथा दूसरी ओर निम्न जातियां होती हैं, जो सामान्यतः भूमिहीन कृषि श्रमिक के रूप में परम्परागत जातिगत आर्थिक संरचना के अन्तर्गत उच्च जाति के साथ आबद्ध रहती हैं। सामान्यतः प्रत्येक गांव में कुछ प्रकार्यात्मक या व्यवसायिक जाति के सदस्य होते हैं, जो अपने विशिष्ट आर्थिक और व्यवसायिक कार्यों के सम्पादन द्वारा ग्रामीण आर्थिक संरचना के अंग होते हैं। ग्रामीण सामाजिक-आर्थिक संरचना में इस प्रकार जाति व्यवस्था एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती है। जाति एक खण्डात्मक और प्रतिबंधित व्यवस्था है। (बेली, 1963) जातिगत संस्तरण की उच्चता और निम्नता, पवित्रता और शुद्धता के धार्मिक सांस्कृतिक मूल्यों पर आधारित है। (ड्यूमा, पोकाक, 1961) परन्तु ग्रामीण सामाजिक संरचना में जाति न केवल उच्चता और निम्नता के संस्तरण तथा संस्थागत

सामाजिक दूरी का निर्धारण करती है, अपितु यह आर्थिक उत्पादन, वितरण, भूस्वामित्व और उपभोग की आर्थिक प्रक्रियाओं का निर्धारक भी है। (मुकर्जी, 1980)

प्रस्तुत अध्ययन में पंचायत प्रतिनिधियों के सामाजिक स्थिति का अध्ययन करते हुए उनके जातिगत पृष्ठभूमि के विषय में जानकारी प्राप्त की गयी है। प्राप्त तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि अध्ययन में विभिन्न जाति वर्गों के सम्मिलित पंचायत प्रतिनिधि हैं। इनमें से 97.98 प्रतिशत हिन्दू तथा 2.02 प्रतिशत अल्पसंख्यक हैं।

सारणी-3.2

जाति के आधार पर पंचायत प्रतिनिधियों का विभाजन

जाति	कुल संख्या	प्रतिशत
ब्राह्मण	16	14.95
क्षत्रिय	6	5.61
वैश्य	1	0.93
यादव	7	6.54
पटेल	26	24.30
चमार	9	8.41
पासी	23	21.50
मुसलमान	2	1.87
मौर्य	5	4.67
कोरी	1	0.93
तेल्ही	1	0.93
स्वर्णकार	1	0.93
कुम्हार	1	0.93
गुप्ता	6	5.61
वर्मा	1	0.93
नाई	1	0.93
कुल	107	100.00

सारणी से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में पिछड़ी जाति के पंचायत प्रतिनिधियों की संख्या सबसे अधिक है, जिसमें 24.30 प्रतिशत पटेल, 6.54 प्रतिशत यादव, 4.67 प्रतिशत मौर्य, 5.61 प्रतिशत गुप्ता तथा कोरी, स्वर्णकार, कुम्हार, वर्मा व नाई में से सभी 0.93 प्रतिशत। अनुसूचित जाति के पंचायत प्रतिनिधियों में से 21.50 प्रतिशत पासी तथा 8.41 प्रतिशत चमार जातियों से पाये गये। जहां तक उच्च जातियों के पंचायत प्रतिनिधियों का सवाल है उनमें ब्राह्मण 14.95 प्रतिशत, क्षत्रिय 5.61 प्रतिशत व वैश्य मात्र 0.93 प्रतिशत सम्मिलित पाये गये।

आयु के आधार पर पंचायत प्रतिनिधियों में जातिगत पृष्ठभूमि का अध्ययन अत्यन्त महत्वपूर्ण तथ्यों पर प्रकाश डालता है। युवा आयु समूह के 31.4 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि उच्च जाति के, 40.0 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि पिछड़ी जाति के (28.6) प्रतिशत अनुसूचित जाति के हैं, जबकि अल्पसंख्यक समुदाय के कोई भी पंचायत प्रतिनिधि नहीं पाये गये।

तथ्यों का तुलनात्मक अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि युवा और मध्यम आयु समूह के अधिकांश पंचायत सदस्य पिछड़ी और अनुसूचित जाति के हैं। उच्च जाति के पंचायत प्रतिनिधियों की संख्या प्रत्येक आयु समूह में तुलनात्मक रूप से कम है। इससे स्पष्ट होता है कि पिछड़ी एवं अनुसूचित जातियों को आरक्षण का विशेष लाभ हुआ है। इसी कारण ग्रामीण नेतृत्व में पिछड़ी और अनुसूचित जातियों के सदस्यों की विशेष रुचि बढ़ी है।

सारणी-3.3

आयु के आधार पर पंचायत प्रतिनिधियों की जाति

आयु	उच्च जाति	पिछड़ी जाति	अनुसूचित जाति	मुस्लिम	योग
21-35 वर्ष (युवा आयु समूह)	11 (31.4)	14 (40.0)	10 (28.6)	0	35 (100.0)
36-50 वर्ष (मध्यम आयु समूह)	9 (15.8)	30 (52.6)	16 (28.1)	2 (3.5)	57 (100.0)
50 वर्ष से अधिक (वृद्ध आयु समूह)	3 (20.0)	5 (33.3)	7 (46.7)	0	15 (100.0)
योग	23 (21.5)	49 (45.8)	33 (30.8)	2 (1.9)	107 (100.0)

शैक्षणिक स्थिति

इस पर कोई विवाद नहीं है कि विकास के सारे रास्ते शिक्षा से ही खुलते हैं। आधुनिक अर्जनात्मक समाज की महत्वपूर्ण विशेषता व्यक्तिगत योग्यता, कुशलता और क्षमता के आधार पर व्यक्ति की सामाजिक स्थिति और भूमिका में विभेदीकरण किया जाना है। व्यक्ति की योग्यता और कुशलता के विकास का माध्यम आधुनिक औपचारिक शिक्षा और प्रशिक्षण है। शिक्षा द्वारा न केवल व्यक्ति के ज्ञान की वृद्धि होती है, अपितु इसके द्वारा उसकी योग्यता, कुशलता और क्षमता का विकास भी होता है। व्यवसायिक और आर्थिक जीवन के सम्बन्ध में शिक्षा व्यक्ति को इस प्रकार से प्रशिक्षित करती है।

होलागढ़ विकास खण्ड एक ऐसे भौगोलिक क्षेत्र में स्थित है जहां शिक्षा की अनेक सुविधाएं उपलब्ध हैं। स्वयं विकास खण्ड में बालक और बालिकाओं के लिए कई प्राथमिक स्कूल, जूनियर स्कूल, हाई स्कूल तक की शिक्षा संस्थाएं उपलब्ध हैं। उच्च शिक्षा के लिए राजकीय महिला महाविद्यालय फाफामऊ तथा आई. के. एम. इण्टर कालेज तथा डिग्री कालेज, आनापुर की सुलभता भी होलागढ़ विकासखण्ड के निवासियों के लिए एक निकटवर्ती उचित शैक्षणिक परिवेश का निर्माण करता है, किन्तु विकासखण्ड के निवासियों से जिस शैक्षणिक स्तर की अपेक्षा की जाती है वह प्रत्यक्ष रूप में परिलक्षित नहीं होती।

अध्ययन में सम्मिलित 107 पंचायत प्रतिनिधियों के शैक्षणिक स्थिति का प्रस्तुतीकरण सारणी-3.4 में किया गया है। तथ्यों के अवलोकन से यह ज्ञात है कि अध्ययन में सम्मिलित 32.71 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि निरक्षर तथा 11.21 प्रतिशत साक्षर पाये गये, जबकि प्राथमिक/जूनियर तथा हाई स्कूल/इण्टर तक की शिक्षा प्राप्त करने वाले पंचायत प्रतिनिधियों की संख्या बराबर क्रमशः (24.30-24.30) प्रतिशत है। केवल (7.48) प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि ऐसे हैं, जिन्होंने स्नातक/स्नातकोत्तर स्तर की शिक्षा प्राप्त की है। अतः पंचायत प्रतिनिधियों के शैक्षणिक स्थिति का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि सामान्यतः इनका शैक्षणिक स्तर अत्यन्त निम्न है। केवल थोड़े से पंचायत प्रतिनिधियों को छोड़कर अधिकांश पंचायत प्रतिनिधि या तो निरक्षर हैं या उनकी शैक्षणिक स्थिति अत्यधिक निम्न है।

सारणी-3.4
पंचायत प्रतिनिधियों की शैक्षणिक स्थिति

शैक्षणिक स्थिति	कुल संख्या	प्रतिशत
निरक्षर	35	32.71
साक्षर	12	11.21
प्राथमिक/जूनियर स्कूल	26	24.30
हाईस्कूल/इण्टर	26	24.30
स्नातक/स्नातकोत्तर	8	7.48
योग	107	100.00

पंचायत प्रतिनिधियों की शैक्षणिक स्थिति का अध्ययन उनकी आयु के आधार पर करने पर महत्वपूर्ण तथ्यों का बोध होता है। युवा आयु समूह के 31.4 प्रतिशत, मध्यम आयु समूह के 31.6 प्रतिशत और वृद्ध आयु समूह के 40 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि निरक्षर हैं। अतः पीढ़ियों के अन्तर के साथ अशिक्षा की मात्रा निरन्तर कम होती जा रही है। वृद्ध पीढ़ी के अधिकांश पंचायत प्रतिनिधि अशिक्षित हैं, जबकि युवा पीढ़ी में अशिक्षा की मात्रा घटकर एक तिहाई ही रह गयी है।

सारणी-3.5

आयु के आधार पर पंचायत प्रतिनिधियों की शैक्षणिक स्थिति

आयु	निरक्षर	साक्षर	प्राथमिक/ जू. हाईस्कूल	हाईस्कूल/ इण्टरमीडिएट	स्नातक	योग
21-35 वर्ष (युवा आयु वर्ग)	11 (31.4)	1 (2.9)	9 (25.7)	9 (25.7)	5 (14.3)	35 (100.0)
36-50 वर्ष (मध्यम आयु वर्ग)	18 (31.6)	8 (14.6)	15 (26.3)	14 (24.6)	2 (3.5)	57 (100.0)
50 वर्ष से अधिक (वृद्ध आयु वर्ग)	6 (40.0)	3 (20.0)	2 (13.3)	3 (20.0)	1 (6.7)	15 (100.0)
योग	35 (32.7)	12 (11.2)	26 (24.3)	26 (24.3)	8 (7.5)	107 (100.0)

इसी प्रकार साक्षरों में युवा आयु समूह के 2.9 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि, मध्यम आयु समूह के 14.6 प्रतिशत तथा वृद्ध आयु समूह के 20.0 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि साक्षर पाये गये। इस प्रकार अध्ययन में पाया गया कि साक्षर पंचायत प्रतिनिधियों में युवा व मध्यम आयु समूह की अपेक्षा वृद्ध आयु समूह की साक्षरता अधिक रही है।

प्राथमिक/जूनियर स्कूल तक की शिक्षा प्राप्त करने वाले पंचायत प्रतिनिधियों की मात्र युवा आयु समूह में 25.7 प्रतिशत, मध्यम आयु समूह में 26.3 प्रतिशत और वृद्ध आयु समूह में 13.3 प्रतिशत है। हाईस्कूल/इण्टर तक की शिक्षा प्राप्त करने वाले पंचायत प्रतिनिधियों की मात्रा युवा आयु समूह में 25.7 प्रतिशत, मध्यम आयु समूह में 24.6 प्रतिशत पायी गयी, जबकि वृद्ध आयु समूह में 20 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि पाये गये। स्नातक तक की शिक्षा ग्रहण करने वाले पंचायत प्रतिनिधियों में युवा वर्ग में 14.3 प्रतिशत, मध्यम आयु समूह में 3.5 प्रतिशत तथा वृद्ध आयु समूह में 6.7 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि पाये गये। शिक्षित पंचायत प्रतिनिधियों के शैक्षणिक स्तर से सम्बन्धित तथ्यों का वितरण में स्पष्ट है कि जिस मात्रा में युवा आयु समूह के पंचायत प्रतिनिधि निम्न मध्यम और उच्च शैक्षणिक स्तर में पाये जाते हैं, उस मात्रा में मध्यम आयु समूह और वृद्ध आयु समूह के सदस्य नहीं हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि युवा पीढ़ी और मध्यम आयु समूह शिक्षा के प्रसार से अपेक्षाकृत अधिक प्रभावित हुई है। होलागढ़ विकासखण्ड के ऐसे पंचायत प्रतिनिधि जो शिक्षित हैं वह सामान्यतः युवा पीढ़ी के ही सदस्य हैं।

जाति के आधार पर तथ्यों का विवरण यह स्पष्ट करता है कि अनुसूचित जाति के 60.6 प्रतिशत, पिछड़ी जाति के 30.6 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि निरक्षर पाये गये, जबकि उच्च जाति व अल्पसंख्यकों में कोई भी पंचायत प्रतिनिधि निरक्षर नहीं पाये गये। अतः अशिक्षा का प्रभाव अनुसूचित जाति व पिछड़ी जाति के पंचायत प्रतिनिधियों में जितनी अधिक देखने को मिलती है, उतनी अधिक उच्च या अल्पसंख्यकों के पंचायत प्रतिनिधियों में नहीं है।

इसी प्रकार साक्षर पंचायत प्रतिनिधियों की मात्रा सबसे अधिक 100 प्रतिशत अल्पसंख्यक समुदाय में और सबसे कम उच्च जातियों में है, जबकि पिछड़ी जाति के सदस्यों 10.2 प्रतिशत तथा अनुसूचित जाति के सदस्यों 9.1 प्रतिशत पाई गयी है। प्राथमिक/जूनियर स्कूल तक की शिक्षा प्राप्त करने वाले पंचायत प्रतिनिधियों की कुल संख्या में उच्च जाति में 30.4 प्रतिशत, पिछड़ी जाति में 26.5 प्रतिशत, अनुसूचित जाति में 18.2 प्रतिशत और अल्पसंख्यक समुदाय में कोई भी पंचायत प्रतिनिधि प्राथमिक/जूनियर स्तर की शिक्षा प्राप्त नहीं पाया गया।

सारणी-3.6

जाति वर्गों के अनुसार पंचायत प्रतिनिधियों की शैक्षणिक स्थिति

जाति	निरक्षर	साक्षर	प्राथमिक/ जू. हाईस्कूल	हाईस्कूल/ इण्टरमीडिएट	स्नातक	योग
उच्च जाति	-	2 (8.7)	7 (30.4)	9 (39.2)	5 (21.7)	23 (100.0)
पिछड़ी जाति	15 (30.6)	5 (10.2)	13 (26.5)	13 (26.5)	3 (6.2)	49 (100.0)
अनुसूचित जाति	20 (60.6)	3 (9.1)	6 (18.2)	4 (12.1)	-	33 (100.0)
मुस्लिम	-	2 (100.0)	-	-	-	2 (100.0)
योग	35 (32.7)	12 (11.2)	26 (24.3)	26 (24.3)	8 (7.5)	107 (100.0)

हाईस्कूल/इण्टर तक की शिक्षा प्राप्त करने वाले उत्तरदाताओं की कुल संख्या में उच्च जाति में 39.2 प्रतिशत, पिछड़ी जाति में 26.5 प्रतिशत और अनुसूचित जाति में 12.1 प्रतिशत है, जबकि अल्पसंख्यक समुदाय में कोई भी पंचायत प्रतिनिधि नहीं पाया गया। स्नातक स्तर तक की शिक्षा प्राप्त करने वाले पंचायत प्रतिनिधियों की संख्या केवल उच्च जाति में 21.7 प्रतिशत तथा पिछड़ी जाति में मात्र 6.2 प्रतिशत

पाई गयी। शेष अन्य जाति के पंचायत प्रतिनिधियों में कोई भी स्नातक स्तर की शिक्षा प्राप्त करने वाला नहीं पाया गया।

पंचायत प्रतिनिधियों की शैक्षणिक स्थिति और उनकी जातिगत पृष्ठभूमि में अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध देखने को मिलता है। अनुसूचित जाति और पिछड़ी जाति के पंचायत प्रतिनिधियों में न केवल अशिक्षा की मात्रा ही अधिक है, अपितु शिक्षा प्राप्त करने वाले पंचायत प्रतिनिधियों का स्तर भी निम्न है। इसके विपरीत उच्च जाति के प्रतिनिधियों में न केवल अशिक्षा की मात्रा कम है, किन्तु शिक्षा ग्रहण करने वाले प्रतिनिधियों का शैक्षणिक स्तर भी उच्च है। ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च जातिगत पृष्ठभूमि के कारण प्रतिनिधि जीवन के नवीन अवसरों और नवीन परिस्थितिकीय को प्राप्त करने के लिए जिस मात्रा में अग्रसर हो रहे हैं उस मात्रा में पिछड़ी और अनुसूचित जाति के सदस्य लाख सुविधाओं के सुलभ कराने के बाद भी नहीं। शिक्षा प्राप्ति के मार्ग में जातिगत पृष्ठभूमि की निम्नता सम्भवतः एक प्रमुख बाधा है और इसी कारण निम्न जाति के प्रतिनिधि शिक्षा प्राप्त करने की ओर अधिक मात्रा में अग्रसर नहीं हो पा रहे हैं।

व्यवसायिक स्थिति

व्यवसाय व्यक्ति के सामाजिक और आर्थिक स्थिति का प्रमुख आधार है। परम्परागत भारतीय समाज में जाति और व्यवसाय का अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। लगभग सभी जातियों का व्यवसाय परम्परागत रूप से निश्चित रहा है। पीढ़ियों के अन्तर के बाद भी उस जाति के सदस्य उन व्यवसायों को करते रहे हैं। इसके अतिरिक्त व्यवसायों की उच्चता और निम्नता का निर्धारण भी जातिगत संस्तरण के अनुरूप होता रहा है। उच्च जाति के सदस्य सामान्यतः ऐसे व्यवसायों से सम्बद्ध रहे हैं, जो व्यवसाय पवित्रता और प्रतिष्ठा की दृष्टि से उच्च रहे हैं तथा निम्न जाति के सदस्य अपवित्र और निम्न स्तर के आर्थिक नियमों से सम्बद्ध रहे हैं। कृषि पर आधारित ग्रामीण संरचना में भी आर्थिक क्रियाओं का विभाजन जातिगत संस्तरण के अनुरूप हुआ है। साधारणतया उच्च जाति के सदस्यों का भूमि स्वामित्व और कृषि उत्पादन पर अधिकार रहा है, जबकि निम्न जाति के सदस्यों की भूमि का कृषि पर आधारित संरचना में अत्यन्त गौड़ रही है। उन्होंने परम्परागत रूप से भूमिहीन कृषक मजदूर, पशुपालन या कृषि पर आधारित द्वितीय और तृतीय प्रकृति की आर्थिक क्रियाओं का सम्पादन किया है।

वर्तमान अध्ययन के उत्तरदाता (पंचायत प्रतिनिधि) जो कि ग्रामीण विकास के लिए उत्तरदायी हैं, उनके मुख्य व्यवसाय के सम्बन्ध में तथ्यों का संकलन किया गया। प्राप्त तथ्यों से यह विदित होता है कि 68.2 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि कृषक मजदूर हैं। 19.6 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि कृषि मजदूर हैं। 4.7 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि

दुकानदारी के कार्यों में संलग्न है। 7.5 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि अन्य तमाम तरह के कार्यों में लगे पाये गये।

तथ्यों का वितरण होलागढ़ विकासखण्ड के पंचायत प्रतिनिधियों के आर्थिक संरचना के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त करता है। अध्ययन में सम्मिलित दो तिहाई से अधिक पंचायत प्रतिनिधियों के आय का मुख्य स्रोत कृषि है। पंचायत प्रतिनिधियों का पांचवा भाग कृषक मजदूर के रूप में कार्यरत है। केवल थोड़े से पंचायत प्रतिनिधि ऐसे हैं, जो दुकानदारी के द्वारा अपने परिवार का भरण-पोषण कर रहे हैं। पंचायत प्रतिनिधियों के व्यवसाय की प्रकृति का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि होलागढ़ विकासखण्ड के अधिकांश सदस्य कृषि के विकास में संलग्न रहते पंचायत के कार्यों से भी जुड़े हैं।

आयु के आधार पर तथ्यों का वितरण यह स्पष्ट करता है कि कृषि में संलग्न पंचायत प्रतिनिधियों की मात्रा मध्यम आयु समूह (70.2) की तुलना में युवा आयु समूह (68.6 प्रतिशत) में अपेक्षाकृत कम पाई गयी है। यह तथ्य स्पष्ट करता है कि नवीन पीढ़ी के सदस्य कृषि को छोड़कर अन्य व्यवसायों की ओर अग्रसर हो रहे हैं। युवा पीढ़ी के सदस्य (68.6 प्रतिशत), कृषि के अतिरिक्त (17.1 प्रतिशत), कृषक मजदूर 5.7 प्रतिशत दुकानदारी, तथा 8.6 प्रतिशत अन्य कार्यों से जुड़े हैं।

मध्यम आयु समूह के 70.2 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि कृषि और 19.2 प्रतिशत कृषक मजदूर के रूप में कार्यरत हैं। इसी पीढ़ी में 5.3 प्रतिशत दुकानदारी एवं 5.3 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि अन्य कार्यों में संलग्न हैं।

वृद्ध आयु समूह के 60 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि कृषि कार्यों में संलग्न हैं। ग्रामीण संरचना की दो प्रमुख विशेषताओं की ओर यह तथ्य संकेत करता है। प्रथम दीर्घकाल तक कृषि कार्य में संलग्न रहना और दूसरा वृद्ध पीढ़ी के सदस्यों के लिए कृषि व्यवसाय छोड़ना सरल नहीं है। पंचायत प्रतिनिधि के रूप में ये कृषि व्यवसाय का नियंत्रण कर रहे हैं, जबकि परिवार के अन्य सदस्य शिक्षा और रोजगार के लिए परिवार से बाहर जाकर निवास या कार्य करते हैं।

आयगत स्थिति

व्यक्ति की वर्गगत स्थिति का निर्धारण उसके व्यवसाय, सम्पत्ति और आय के आधार पर आधुनिक समाज में किया जाता है। इसमें से आय वर्गगत स्थिति के निर्धारण का सर्वाधिक महत्वपूर्ण और प्रभावशाली आधार है। आय जहां एक ओर व्यक्ति के आर्थिक सम्पन्नता और विपन्नता का प्रतीक है। वरन् यह दूसरी ओर उसके शक्ति, सुविधा, प्रभाव, उपभोगशीलता और अधिकार को भी सूचित करता है। परम्परागत ग्रामीण संरचना में व्यक्ति के वर्गगत सामाजिक निर्धारण में उसके आय का

कोई विशेष महत्व नहीं रहता है। परम्परागत ग्रामीण संरचना ने भूस्वामित्व और जातिगत उच्चता में व्यक्ति की सामाजिक स्थिति का निर्धारण किया है न कि उसकी आयगत स्थिति ने।

वर्तमान अध्ययन में पंचायत प्रतिनिधियों के आयगत स्थिति का विश्लेषण यह स्पष्ट करता है कि बहुसंख्यक पंचायत प्रतिनिधियों (68.2 प्रतिशत) की मासिक आय रुपये 1000-2000 के बीच है। 14 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों की मासिक आय रुपये 2000-3000 के मध्य है। 5.6 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों की आय रुपये 3000-4000, 10.3 प्रतिशत प्रतिनिधियों की आय रुपये 4000 से अधिक है, जबकि 1.97 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों की आय रुपये 1000 से भी कम पाई गई। अतः आप के दृष्टिकोण से यह स्पष्ट है कि अध्ययन में सम्मिलित अधिकांश पंचायत प्रतिनिधियों की आय 1000-2000 के मध्य है यह स्थिति इनके निम्न आर्थिक स्थिति की द्योतक है।

सारणी-3.7

पंचायत प्रतिनिधियों की मासिक आय

आयगत स्थिति	आवृत्ति	प्रतिशत
1000 से कम	2	1.97
1000-2000	73	68.2
2000-3000	15	14.0
3000-4000	6	5.6
4000 से अधिक	11	10.3
योग	107	100.0

जातिगत पृष्ठभूमि के आधार पर पंचायत प्रतिनिधियों की आयगत स्थिति का अध्ययन करने से यह ज्ञात होता है कि उच्च जाति 43.5 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों की मासिक आय रू० 1000-2000, 13 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों की मासिक आय रू० 2000-3000, 17.4 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों की रू० 3000-4000 तथा 26.1 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों की मासिक आय रू० 4000 से अधिक है, जबकि उच्च जाति में रू० 1000 से कम की मासिक आय वाले किसी भी पंचायत प्रतिनिधि को नहीं पाया गया। पिछड़ी जाति के पंचायत प्रतिनिधियों में से 65.3 प्रतिशत की मासिक आय रू० 1000-2000, 20.4 प्रतिशत की मासिक आय रू० 2000-3000, 4.1 प्रतिशत की मासिक आय रू० 3000-4000 तथा 10.2 प्रतिशत की मासिक आय रू० 4000 से अधिक है, जबकि पिछड़ी जाति के सदस्यों में भी रू० 1000 से कम मासिक आय को भी प्रतिमान उपलब्ध नहीं हुआ। अनुसूचित जाति के 6.1 प्रतिशत सदस्यों की मासिक आय रू० 1000 से कम, 87.6 प्रतिशत की मासिक आय रू० 1000-2000 के

मध्य तथा 6.1 प्रतिशत की मासिक आय 2000-3000 है। रू0 3000-4000 तथा रू0 4000 से अधिक मासिक आय की श्रेणी में कोई भी अनुसूचित जाति का पंचायत प्रतिनिधि उपलब्ध नहीं हो सका। मुस्लिम जाति के सभी पंचायत प्रतिनिधि केवल रू0 1000-2000 मासिक आय की श्रेणी में पाये गये। पंचायत प्रतिनिधियों की आयगत स्थिति का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि उनकी जातिगत स्थिति और आय में निकट सम्बन्ध है। जिन पंचायत प्रतिनिधियों की आयगत स्थिति सर्वाधिक असंतोषजनक है, वे अनुसूचित जाति और मुस्लिम जाति के सदस्य हैं। जिन पंचायत प्रतिनिधियों की आयगत स्थिति तुलनात्मक रूप से संतोषजनक है, वे साधारणतया उच्च और पिछड़ी जाति के सदस्य हैं। दोनों जाति के सदस्यों में निम्न आय वर्ग के सदस्यों में समानता पाई गयी है पर उच्च आय वर्ग के प्रतिनिधियों में काफी विषमता देखी गयी।

सारणी-3.8

जाति वर्गों के अनुसार पंचायत प्रतिनिधियों की मासिक आय

(रूपयों में)

जाति	1000 से कम	1000-2000	2000-3000	3000-4000	4000 से अधिक	योग
उच्च जाति	-	10 (43.5)	3 (13.0)	4 (17.4)	6 (26.1)	23 (100.0)
पिछड़ी जाति	-	32 (65.3)	10 (20.4)	2 (4.1)	5 (10.2)	49 (100.0)
अनुसूचित जाति	2 (6.1)	29 (87.9)	2 (6.1)	-	-	33 (100.0)
अल्पसंख्यक	-	2 (100.0)	-	-	-	2 (100.0)

अतः वर्तमान अध्ययन में पंचायत प्रतिनिधियों के आयगत, शैक्षणिक, जातिगत, व्यवसायिक, आयगत दशाओं का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि अध्ययन में सम्मिलित पंचायत प्रतिनिधि ग्राम पंचायत के उत्तरदायी और विकास के कार्यों में संलग्न वे सदस्य हैं जो विकेन्द्रीकरण की अवधारण के अन्तर्गत गांव के बहुमुखी विकास के लिए उत्तरदायी हैं। उनकी शैक्षणिक उपलब्धि और आर्थिक स्तर में उनके जातिगत संस्तरण की विशेषताएं प्रतिबिम्बित होती हैं। उच्च जाति के पंचायत प्रतिनिधि की शैक्षणिक और आर्थिक स्थिति स्पष्ट रूप से अनुसूचित जाति और पिछड़ी जाति से सुदृढ़ है। इस असमानता के निवारण के लिए सभी जातियों को समान शैक्षणिक और आर्थिक विकास हेतु अवसर उपलब्ध कराने की आवश्यकता है तभी गांवों के विकास का सपना पूरा हो सकेगा।

संदर्भ ग्रन्थ

बेली एफ. जी. (1963): पोलिटिकल एण्ड सोशल चेन्ज, वकर्ले यूनिवर्सिटी आफ कैलीफोर्निया प्रेस।

मुकर्जी, ए. (1980): द चमार आफ उत्तर प्रदेश, ए स्टडी इन सोशल ज्योग्राफी।

ड्यूमा पोकाक (1962): नोटस आफ जजमानी रिलेशनशिप, कन्ट्रीब्यूशन टू इण्डियन सोसियोलॉजी, नं. VI दिसम्बर।

ग्रीन डब्लू. ए. (1957): सोशियोलॉजी, मार्गो हिल

ग्राम्य विकास कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता

ग्राम विकास के संदर्भ में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता का आंकलन करने हेतु तीन मुख्य बिन्दुओं को चुना गया है: कृषि विकास कार्यक्रम, जन-स्वास्थ्य विकास कार्यक्रम और ग्रामीण शिक्षा विकास कार्यक्रम। उक्त परिप्रेक्ष्य में यहां पर पंचायत प्रतिनिधियों से प्राप्त तथ्यों का प्रस्तुतीकरण एवं विवेचना पृथक-पृथक बिन्दुओं पर की गयी है-

कृषि विकास कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता

आर्थिक उत्पादन मानव समूह की एक आधारभूत क्रिया है। अतः उत्पादन के तरीके, उत्पादन की शक्तियां और उत्पादन सम्बन्धी किसी भी सामाजिक संरचना, विचारधारा और मनोवृत्तियों के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। ग्रामीण समुदाय मुख्यतः कृषि व्यवसाय पर आधारित होता है, इसलिए कृषि के विकास, यंत्रीकरण और उन्नति प्रविधि के प्रयोग हेतु जन-समुदाय जागरूक तो रहता ही है। इसे और प्रभावी बनाने हेतु विकेन्द्रीकरण के तहत ग्राम पंचायतों के माध्यम से कृषि समितियों का गठन किया गया है। ये समितियां स्थानीय स्तर पर कृषि के विकास के लिए उत्तरदायी होती हैं। पंचायत प्रतिनिधि इन समितियों के सदस्य होते हैं, जो कृषि के विकास कार्यक्रमों में अपनी सहभागिता सुनिश्चित करते हैं। वर्तमान अध्ययन में कृषि विकास कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता के स्तर को जानने का प्रयास किया गया है।

उन्नतशील बीजों का प्रयोग

पंचायत प्रतिनिधियों से कृषि विकास से सम्बन्धित अनेक प्रश्न पूछा गया कि फसलों की पैदावार बढ़ाने के लिए क्या आप उन्नतशील बीजों का उपयोग करते हैं। विकास खण्ड के 107 पंचायत प्रतिनिधियों में 70.1 प्रतिशत लोगों ने स्वीकार किया कि फसलों की उपज बढ़ाने के लिए वे उन्नतशील बीजों का प्रयोग करते हैं, जबकि 2.8 प्रतिशत प्रतिनिधियों का उत्तर नकारात्मक रहा। उन्होंने उन्नतशील बीजों के प्रयोग न करने की बात संज्ञान में लायी। 3.7 प्रतिशत प्रतिनिधि उन्नतशील बीज के प्रयोग सम्बन्धी कोई उत्तर ही नहीं दे सके। 23.4 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों के लिए उन्नतशील बीजों का कोई महत्व ही नहीं रहा, क्योंकि शायद वे सभी पंचायत

प्रतिनिधि भूमिहीन होने के कारण कृषि कार्यों से वंचित रहे। अतः इससे स्पष्ट होता है कि अधिकांश पंचायत प्रतिनिधि उन्नतशील बीजों की जानकारी रखते हैं और उनका प्रयोग करते हैं। (सारणी-4.1)

सारणी-4.1 उन्नतशील बीजों का प्रयोग

	आवृत्ति	प्रतिशत
हां	75	70.1
नहीं	3	2.8
उत्तर न देने वाले	4	3.7
लागू नहीं	25	23.4
योग	107	100.0

पंचायत प्रतिनिधियों से उन्नतशील बीजों की जानकारी हेतु पुनः प्रश्न किये गये कि आपको उन्नतशील बीजों की जानकारी कहां से होती है। इस प्रश्न के उत्तर में 18.7 प्रतिशत लोगों ने उन्नतशील बीजों की जानकारी के सम्बन्ध में विकास खण्ड को बताया, 11.2 प्रतिशत प्रतिनिधियों ने बीज भण्डार से जानकारी की बात स्वीकार की, 7.5 प्रतिशत लोगों ने बीज की दुकानों से जानकारी की बात बताई। 12.1 प्रतिशत ने अपने मित्रों से जानकारी मिलने की बात स्वीकार की। अन्य कुछ लोगों ने दुकानों, कृषि अधिकारी, या अन्य स्रोतों से जानकारी उपलब्ध की, जबकि 11.2 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने इससे सम्बन्धित कोई भी जानकारी नहीं दे सके।

सारणी-4.2 उन्नतशील बीजों की जानकारी के स्रोत

विकास खण्ड	20	18.7
बीज भण्डार	12	11.2
दुकान	8	7.5
इष्ट मित्रों	13	12.1
बाजार	5	4.7
स्वयं	4	3.7
कृषि अधिकारी	5	4.7
मालिक	1	0.9
उत्तर न देने वाले	12	11.2
लागू नहीं	27	25.2
योग	107	100.0

उन्नतशील बीजों की जानकारी के बाद पंचायत प्रतिनिधियों आलू के साथ-साथ धान, गेहूं, उड़द, मूंग, ज्वार, बाजरा और अरहर आदि की नयी किस्मों के प्रयोग की बात संज्ञान में लायी। इन उन्नतशील बीजों की उपलब्धता से सम्बन्धित एक प्रश्न आगे और पूछा गया कि इन बीजों को कहां से उपलब्ध करते हैं। इस प्रश्न के उत्तर में प्रतिनिधियों ने बताया कि उन्नतशील बीजों को, बीज भण्डार, दुकान व घर में भण्डारण किये हुए बीजों का प्रयोग करते हैं। इससे स्पष्ट है कि उन्नतशील बीजों की जानकारी और उपयोग में पंचायत प्रतिनिधि अग्रणी है।

रासायनिक उर्वरक का उपयोग

उन्नतशील बीजों के प्रयोग की भांति रासायनिक उर्वरकों व खादों का प्रयोग उत्पादन को प्रत्यक्ष रूप में प्रभावित करता है, क्योंकि पौधों के विकास के लिए आवश्यक भोज्य पदार्थों की आपूर्ति उर्वरकों एवं खादों द्वारा ही होती है। पौधों के सन्तुलित विकास के लिए देशी खादों, नाइट्रोजन, फास्फेट तथा पोटैश आदि तत्वों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

रासायनिक उर्वरकों का अत्यधिक उपयोग जहां एक ओर कृषि उत्पादकता की वृद्धि में सहायक सिद्ध हुआ है वहीं उसका लगातार उपयोग भूमि की प्राकृतिक उर्वरता का ह्रास भी करता है, इसलिए केवल रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग ही कृषि की उत्पादकता वृद्धि की समस्या का हल नहीं हो सकता। दीर्घकाल तक उसकी प्राकृतिक उर्वरता बनाये रखने के लिए रासायनिक उर्वरकों के साथ-साथ देशी एवं हरी खादों का भी प्रयोग किया जाता है। अध्ययन क्षेत्र के सर्वेक्षण के समय ऐसा अनुभव किया गया है कि क्षेत्र में देशी खादों के प्रयोग की मात्रा दिनोदिन घटती जा रही है। रासायनिक खादों के प्रयोग से सम्बन्धित पूछे गये प्रश्नों से जो तथ्य सामने आये हैं उससे पता चलता है कि 71 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि ऐसे हैं, जो फसलों की पैदावार बढ़ाने के लिए रासायनिक खादों का प्रयोग करते हैं। इन खादों को नामांकित करते हुए उन लोगों ने बताया कि कम्पोस्ट खाद, डी.ए.पी. यूरिया, पोटैश, एन.पी.के., जिंक, सल्फेट आदि को किसी न किसी रूप में उत्पादकता बढ़ाने हेतु उपयोग में लाते हैं, जबकि 24.3 प्रतिशत सदस्यों ने रासायनिक खादों के उपयोग से वंचित पाये गये। मात्र 4.7 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि ऐसे थे, जिन्होंने खादों के उपयोग के सम्बन्ध में कोई उत्तर नहीं दे सके।

कीटनाशकों का उपयोग

फसलों की अच्छी पैदावार के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि पौधों को विभिन्न रोगों व बीमारियों से सुरक्षित रखा जाय। अध्ययन क्षेत्र के कृषकों में प्रति हेक्टेयर भूमि से अधिकाधिक उत्पादन प्राप्त करने की प्रवृत्ति जागृत हुई है तथा उनके

लिए वे विभिन्न प्रकार के निवेशों का प्रयोग करते हैं, पौधों में लगने वाली बीमारियों व रोगों से बचाने के लिए अनेक प्रकार की दवाओं का प्रयोग करते हैं।

सम्प्रति विभिन्न फसलों की सुरक्षा के लिए जब पंचायत प्रतिनिधियों से जानकारी हेतु प्रश्न किये गये कि फसलों को रोगों व कीट/पतंगों से बचाने के लिए कौन-कौन से कीटनाशक दवाओं का प्रयोग करते हैं। प्रश्न के जवाब में केवल 34.6 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने डायथेनियम, आइसोपोट्रान सल्फर, जिंक, डी.पी.टी., फास्फोरस, फ्यूरोडान, फोरेट इन्डोफिल आदि कीटनाशक दवाओं के प्रयोग के सम्बन्ध में जानकारी उपलब्ध करायी। 40.2 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि कीटनाशक दवाओं की जानकारी के अभाव में उत्तर नहीं दे सके, जबकि 25.2 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों को कीटनाशक दवाओं से कोई लेना देना नहीं रहा, क्योंकि उनके पास न तो खेती के लिए भूमि थी और न ही कोई फसल। इससे स्पष्ट होता है पंचायत प्रतिनिधियों में फसलों में लगने वाली बीमारियों/रोगों से नियंत्रण हेतु कीटनाशक दवाओं की जानकारी का अभाव लगता है।

नये कृषि यंत्रों का प्रयोग

कृषि कार्यों में यंत्रीकरण के प्रयोग से तात्पर्य यथा-सम्भव मानव तथा पशु शक्ति के स्थान पर यंत्रों व उपकरणों के अधिकाधिक प्रयोग से है। अध्ययन क्षेत्र के अधिकांश कृषक गरीब व लघु एवं सीमान्त जोत वाले हैं तथा अपने कृषि कार्यों में साधारणतः परम्परागत उपकरणों का ही प्रयोग करते हैं, जो गहन कृषि की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सर्वथा असमर्थ रहे हैं। बड़े-बड़े कास्तकार जो संख्या में सीमित हैं, सुधरे हुए यंत्रों व उपकरणों का प्रयोग करते हैं। आज की खेती अधिक लाभकारी होती जा रही है। फसलों की उत्पादकता को बढ़ाने के लिए अनेक प्रकार के कृषि यंत्रों का प्रयोग हो रहा है। ग्राम स्तर पर गठित की गयी कृषि विकास समितियां कृषि के विकास हेतु नवीन यंत्रीकरण हेतु कृषकों को विशेष जागरूक कर रही हैं। वर्तमान अध्ययन में नये कृषि यंत्रीकरणों की जानकारी हेतु पंचायत प्रतिनिधियों से यह पूछा गया है कि आप खेती में कौन-कौन से नये कृषि यंत्रों का प्रयोग करते हैं?

विकास खण्ड के 107 पंचायत प्रतिनिधियों में से 72.0 प्रतिशत प्रतिनिधियों ने खेती में नवीन कृषि यंत्रों के प्रयोग की पुष्टि करते हुए उन्होंने यह बात संज्ञान में लायी कि कृषि फसलों की पैदावार को बढ़ाने के लिए मुख्य रूप से ट्रैक्टर, ट्राली, थ्रेसर, स्प्रे मशीन, पम्पिंग सेट, ट्यूबवेल, चारा काटने की मशीन आदि का प्रयोग हो रहा है। 3.7 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने कृषि में नये यंत्रों के प्रयोग पर कोई उत्तर नहीं दे सके, जबकि 24.3 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों को कृषि के कार्यों में लाये जा रहे नवीन यंत्रों के प्रयोग से कोई लेना-देना नहीं है, क्योंकि वे भूमिहीन थे। इससे ऐसा अस्पष्ट होता है कि आज भी 30 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि ऐसे हैं जिन्हें

कृषि के नवीन यंत्रों के विषय में जानकारी ही नहीं है। जो क्षेत्रीय आवश्यकताओं को देखते हुए उपयुक्त नहीं है। यद्यपि बड़े पैमाने पर यंत्रों का प्रयोग क्षेत्रीय तौर पर सामान्य कृषकों के लिए लाभकारी नहीं होता, किन्तु दिनों-दिन बढ़ते हुए श्रमिकों की समस्या के निदान हेतु आधुनिक साधारण कृषि यंत्रों के प्रयोग के प्रसार की आवश्यकता है। इसके लिए लघु एवं सीमान्त कृषकों को जो व्यक्तिगत रूप में यंत्रों व उपकरणों को खरीदने में समर्थ नहीं है किराये पर सुगमता पूर्वक इन यंत्रों की सुलभता सुनिश्चित कर अपनी खेती को लाभकारी बना सकते हैं।

किसान सेवा केन्द्र

कृषि में सम्प्रति हंसिया, दरांती से लेकर ट्रैक्टर, थ्रेसर, पम्पिंग सेट, रासायनिक उर्वरक नये उन्नतशील बीज, कीटनाशक आदि के दिनों-दिन बढ़ते हुए प्रयोग के फलस्वरूप उनके रख-रखाव, मरम्मत, व उपलब्धता आदि की आवश्यकताएं बढ़ती जा रही है, अतएव ग्रामीण क्षेत्रों में ऐसे किसान सेवा केन्द्रों की स्थापना की गयी है जहां यंत्रों व उपकरणों की मरम्मत, किराये पर उनकी उपलब्धता तथा कृषि निवेशों की प्राप्ति की सुविधाएं सुलभ हो। इन केन्द्रों की स्थापना के लिए कृषि औद्योगिक विकास निगम सहकारिता विभाग, कृषि विभाग अथवा व्यक्तिगत क्षेत्रों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इससे न केवल कृषकों को ही सुविधाएं प्राप्त होती है, अपितु बहुत से लोगों को रोजगार के अवसर भी सुलभ होते हैं तथा ग्रामीण तकनीकी का शहरोन्मुखी प्रवाह भी मन्द होता है।

अध्ययन क्षेत्र में ही कुछ ऐसे सेवा केन्द्र हैं जहां कृषि यंत्रों एवं उपकरणों की सामान्य मरम्मत का कार्य होता है तथा जहां से कृषि कार्य हेतु ट्रैक्टर, बीज, उर्वरक आदि उपलब्ध हो जाते हैं। बड़े-बड़े यंत्रों जैसे ट्रैक्टर आदि अथवा बड़ी-बड़ी खराबियों के लिए लोगों को बाहर जाना पड़ता है, जिसमें अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इन कठिनाइयों को देखते हुए होलागढ़ में एग्री सेवा स्टेशन तथा क्षेत्र के सभी सेवा केन्द्रों पर कृषि से सम्बन्धित सभी सुविधाएं सुलभ हो जाती हैं। इससे सम्बन्धित जानकारी के लिए पंचायत प्रतिनिधियों से किसान सेवा केन्द्रों के विषय में कुछ इस प्रकार प्रश्न किये गये क्या आपके विकास खण्ड में किसान सेवा केन्द्र है। प्रश्न के जवाब में जो तथ्य सामने आये उसे सारणीबद्ध इस प्रकार किया गया।

सारणी-4.3

किसान सेवा के सम्बन्ध में जानकारी

हां	52	48.6
नहीं	7	6.5
नहीं मालूम	48	44.9
योग	107	100.0

सारणी 4.3 के अवलोकन से स्पष्ट है कि सभी पंचायत प्रतिनिधि किसान सेवा केन्द्र के सम्बन्ध में जानकारी नहीं रखते। मात्र 48.6 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने क्षेत्र में किसान सेवा केन्द्र की उपलब्धता की बात स्वीकार की, जबकि 6.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने किसान सेवा केन्द्र न होने की बात संज्ञान में लायी। 44.9 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि ऐसे पाये गये जिन्हें सेवा केन्द्र की जानकारी ही नहीं है। उपयुक्त पिश्लेषण से स्पष्ट है कि ग्रामीण स्तर पर किसान सेवा केन्द्र की कोई महत्वपूर्ण भूमिका नहीं है, जिसके कारण लोग किसान सेवा केन्द्र के सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी रखते हो।

सिंचाई के साधन

कृषिगत भूमि उपयोग में सिंचाई का अपना एक विशिष्ट एवं महत्वपूर्ण स्थान है। इसका महत्व उस समय और भी बढ़ जाता है जबकि सीमित भूमि संसाधनों पर उत्तरोत्तर द्रुतगति से बढ़ती हुई जनसंख्या के दबाव से उत्पन्न समस्याओं के निदान हेतु अन्नोत्पादन के लिए अधिकाधिक क्षेत्र उपलब्ध कराने एवं कृषित क्षेत्रों का सघन उपयोग करने के लिए भगीरथ प्रयास जारी है।

अध्ययन क्षेत्र में सिंचाई के लिए जल की प्राप्ति, भूमिगत तथा धरातलीय जल के रूप में होती है। भूमिगत जल से नलकूपों व कुओं द्वारा तथा धरातलीय जल से नहरों, तालाबों व पोखरों द्वारा सिंचाई का कार्य किया जाता है। सारणी 4.4 से यह ज्ञात होता है कि सिंचाई के विभिन्न साधनों में नलकूपों का महत्व सर्वोपरि है।

सारणी-4.4

सिंचाई के मुख्य साधन

साधन	आवृत्ति	प्रतिशत
नहर	77	72.0
ट्यूबवेल	9	8.4
पम्पिंग सेट	11	10.3
उत्तर न देने वाले	1	0.9
लागू नहीं होता	9	8.4
योग	107	100.0

विश्लेषण से ऐसा पता चलता है कि 72 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने अपने खेतों की सिंचाई नहरों द्वारा की है, जबकि पम्पिंग सेट द्वारा 10.3 प्रतिशत सदस्यों ने सिंचाई की बात संज्ञान में लाई। अध्ययन क्षेत्र में ट्यूबवेल से सिंचाई करने वाले 8.4 प्रतिशत सदस्य पाये गये। क्षेत्र में नहरों का जाल बिछा है। नहरों द्वारा सिंचाई कार्य

यद्यपि अन्य साधनों की अपेक्षा पर्याप्त सस्ता व सुविधाजनक है, किन्तु उनके द्वारा जलापूर्ति की मात्रा व उसका समय अनिश्चित है जिससे इनके द्वारा सिंचाई का कार्य अविश्वसनीय हो गया है।

सिंचाई के उपयुक्त भौगोलिक विवेचन से स्पष्ट है कि भूमि पर बढ़ते हुए जनांकीय भार तथा प्रति हेक्टेयर अधिकाधिक उत्पादन लेने की बढ़ती हुई प्रवृत्ति को देखते हुए, उसमें पर्याप्त वृद्धि की आवश्यकता है। साथ ही, निरन्तर गिरते हुए जल स्तर को ध्यान में रखते हुए जल संसाधनों का दुरुपयोग रोकना होगा।

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि पंचायत प्रतिनिधियों की सभी कृषि विकास कार्यक्रमों में अपेक्षित सहभागिता नहीं है जो कि कृषि के बहुमुखी विकास में बाधक है। बीजों, उर्वरकों एवं कृषि यंत्रों में व्यापक प्रचार-प्रसार ने पंचायत प्रतिनिधियों को उनके प्रयोग हेतु प्रेरित किया है। वांछित लाभ मिलने के कारण आज वे इनके प्रयोग में अभ्यस्त हो चुके हैं। कीटनाशकों का प्रयोग वे अल्पज्ञतावश नहीं करते। किसान सेवा केन्द्र अधिकारियों की इच्छा पर चलते हैं तथा कृषि आधारित कुटीर उद्योग अविकसित अवस्था में हैं जो बड़े उद्योगों द्वारा तैयार माल से प्रतियोगिता करने में सर्वथा असमर्थ हैं।

स्वास्थ्य कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता

ग्रामीण क्षेत्रों में देश की लगभग 74 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है, जो निर्धनता, अभाव, कुपोषण, अल्पपोषण, गन्दगी, कर्ज और भयंकर बीमारियों से पीड़ित है। गांव में सामुदायिक स्वास्थ्य सेवाओं का प्रसार सरकार का मुख्य प्रयास होना चाहिए। स्वतंत्रता के समय देश के नगरीय क्षेत्रों में ही चिकित्सालय एवं औषधालयों की सीमित सुविधाएं उपलब्ध थी, किन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में सामुदायिक स्वास्थ्य रक्षा एवं प्राथमिक चिकित्सा की सुविधाएं लगभग न के बराबर थी। सरकारी प्रयास से 1952 से सामुदायिक विकास कार्यक्रम ग्रामीण अंचलों में भी प्रारम्भ हुए, जिनके कारण विकास खण्डों के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं का क्रियान्वयन हो सका। इसका लाभ ग्रामीण जनता को गांवों में फैली संक्रामक बीमारियों, हैजा, इंप्लूएन्जा, पेचिस, प्लेग तथा मलेरिया जैसी भयंकर महामारियों के नियंत्रण के रूप में मिला।

अनेक प्रकार की महामारियों से निजात पाने के बाद भी आज गांवों में जो स्वास्थ्य सुविधाओं की व्यवस्था की गयी है उसमें ग्रामीण क्षेत्र पूरी तरह उपेक्षित रहा। यद्यपि गांव को आधार मानकर स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध कराई गईं, लेकिन जिस तरह अन्य मानवीय सुविधाएं नगरों से गांव की ओर ले जाने का प्रयास रहा उसी प्रकार स्वास्थ्य सुविधाएं भी शहरों से चल कर गांव में पहुंची। गांवों में स्वास्थ्य सुविधाओं की जो व्यवस्था की गयी उसमें स्वदेशी चिकित्सा पद्धति की पूरी तरह उपेक्षा कर

विदेशों में स्थापित स्वास्थ्य सुविधाओं का सीमित मात्रा में ग्रामीण अंचलों में विस्तार किया गया। इस कारण जो स्थानीय सुविधाएं थी वह भी धीरे-धीरे समाप्त होती गयी और गांव भी एलोपैथी चिकित्सा पद्धति की परिधि में आ गए। ग्रामीण परिवेश के लिहाज से यह पद्धति पूर्णतया अपर्याप्त और गरीबों की पहुंच के बाहर थी। एक तो गांवों में अस्पतालों की व्यवस्था नहीं थी और कहीं थी भी तो कुशल डाक्टरों का प्रायः अभाव था। इसलिए गांव में स्वास्थ्य समस्याएं निरन्तर जटिल होती गई और स्वास्थ्य लाभ हेतु लोगों की शहरों और कस्बों पर निर्भरता दिनोदिन बढ़ती ही गयी।

ऐसे समय में गांव के आम आदमी को चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए सरकार द्वारा समय-समय पर अनेक प्रयास किये गये। इसी प्रयास के तहत ग्राम पंचायत स्तर पर स्वास्थ्य समितियों का गठन किया गया। अब ये स्वास्थ्य समितियां ही गांवों के लोगों की स्वास्थ्य समस्याओं के निदान हेतु सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए प्रयासरत हैं। इनके द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में क्रियान्वित किये जा रहे कुछ स्वास्थ्य कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता से सम्बन्धित कुछ तथ्य एकत्र किये गये जो सारणी 4.5 में प्रस्तुत हैं।

भोजन की समस्या

गांवों में निवास करने वाले लोगों में आहारों की अपूर्णता मात्रात्मक भी होती है और गुणात्मक भी। अधिक गरीब लोगों की तो मूलभूत कैलोरी आवश्यकताएं भी पूरी नहीं होती। प्रोटीन, विटामिन तथा खनिजों का स्तर तो बहुत ही कम होता है। ऐसे आधारों का उपभोग देश के निम्न आय वर्गों तथा मध्यम आय वर्गों में देखा जाता है, जिससे पोषण तत्वों की स्पष्ट अपूर्णता के कारण अनेक रोग पैदा हो जाते हैं। इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर पंचायत प्रतिनिधियों से प्रश्न पूछा गया कि क्या आप की ग्राम पंचायत में कुछ ऐसे भी लोग हैं जिन्हें दो समय के भोजन की भी समस्या है। इस प्रकार के प्रश्न पूछने का केवल एक ही मकसद यह था कि ग्राम पंचायत प्रतिनिधियों में ग्रामीण गरीबी के प्रति उनकी सोच का पता लगाना था और उसके निवारण में उनकी क्या सहभागिता है।

सारणी-4.5
भोजन की समस्या

	आवृत्ति	प्रतिशत
हां	19	17.8
नहीं	54	50.5
नहीं मालूम	34	31.8
योग	107	100.0

सारणी से स्पष्ट है कि मात्र 17.8 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि इस बात को स्वीकार करते हैं कि आज भी लोगों को दो समय के भोजन की समस्या है, किन्तु 50 प्रतिशत से अधिक पंचायत प्रतिनिधि इस बात को स्वीकार नहीं करते उनका कहना है कि आज गांव में भोजन संबंधी ऐसी कोई समस्या नहीं है, जबकि 31.8 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों को गांव में व्याप्त भुखमरी की समस्या का कुछ भी ज्ञान नहीं है। गांव स्तर पर फैली भुखमरी के निवारण हेतु सामूहिक रूप से चलाए जा रहे कार्यक्रमों की जानकारी हेतु एक प्रश्न और उनसे पूछा गया कि आप के ग्राम पंचायत स्तर पर कुछ सामूहिक रूप से भूखे लोगों के भोजन हेतु खाद्य पदार्थों की उपलब्धता की व्यवस्था है? इस सम्बन्ध में जो तथ्य सामने आये वे इस प्रकार हैं।

सारणी-4.6 भोजन हेतु खाद्य पदार्थों की उपलब्धता

	आवृत्ति	प्रतिशत
हां	16	15.0
नहीं	89	83.0
उत्तर न देने वाले	02	1.9
योग	107	100.0

तथ्यों के विश्लेषण के अनुसार 83 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों का कहना है कि गांव में भूखे लोगों हेतु सामूहिक रूप से खाद्य पदार्थ उपलब्ध कराने की कोई व्यवस्था नहीं है। मात्र 15 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने इस बात को संज्ञान में लाया कि कहीं-कहीं कुछ विशेष अवसरों पर खाद्य पदार्थ भूखे लोगों को देने की प्रथा है। इस सम्बन्ध में कुछ ऐसे भी पंचायत प्रतिनिधि पाये गये जिन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया।

स्वास्थ्य सुविधाएं

गांवों में उपलब्ध स्वास्थ्य सुविधाओं के विभिन्न पक्षों पर विचार करने और उनसे अवगत होने के ध्येय से पंचायत प्रतिनिधियों से प्रश्न किया गया कि ग्राम स्तर पर आम आदमी के स्वास्थ्य की देखभाल हेतु कौन-कौन सी सुविधाएं उपलब्ध हैं। प्रश्न के उत्तर में पंचायत प्रतिनिधियों से निम्न स्वास्थ्य सुविधाओं की जानकारी हुई जो प्रायः गांवों में किसी न किसी रूप में देखने को मिलती है। प्रतिनिधियों ने बताया कि प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, सरकारी डाक्टर और गैर सरकारी डाक्टर, प्रशिक्षित दाईयां, उपकेन्द्र सचल दल, मेडिकल स्टोर आदि गांवों में सभी की व्यवस्था होने की बात संज्ञान में लाई, परन्तु जब उनसे पूछा गया कि क्या आप इनकी सेवाओं से संतुष्ट हैं। इस प्रश्न के उत्तर में जो तथ्य सामने आये वे इस प्रकार हैं-

सारणी-4.7
सरकारी स्वास्थ्य सुविधाएं

	आवृत्ति	प्रतिशत
हां	30	28.0
नहीं	74	69.2
उत्तर नहीं दे सके	03	2.8
योग	107	100.0

लगभग 70 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने ग्रामीण स्वास्थ्य सुविधाओं से संतुष्ट नहीं दिखे। मात्र 28 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि ग्रामीण स्वास्थ्य सुविधाओं से किसी न किसी रूप में संतुष्ट पाये गये, जबकि मात्र 2.8 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि उत्तर देने में असमर्थ रहे। इससे ऐसा स्पष्ट होता है कि पंचायत प्रतिनिधि गांव की बीमारियों और सरकारी स्वास्थ्य सुविधाओं से भलीभांति परचित हैं। यह उनकी सहभागिता का द्योतक है।

पंचायतों द्वारा ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं की निगरानी सम्बन्धी प्रश्न पूछे जाने पर पता चला कि 62.6 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने इस बात की जानकारी दी कि गांव की स्वास्थ्य सुविधाओं की निगरानी ग्राम पंचायतों द्वारा नहीं होती है। मात्र 11.2 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने बताया कि ग्रामीण स्वास्थ्य सुविधाओं की निगरानी पंचायतों के द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से की जाती है, जबकि 26 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि को निगरानी के सम्बन्ध में कुछ जानकारी ही नहीं है। इससे ऐसा प्रतीत होता है ग्रामीण स्वास्थ्य सुविधाओं की देखभाल ग्राम पंचायतों के माध्यम से नहीं हो रही है जिससे स्वास्थ्य सुविधाओं का समुचित लाभ गांव वालों को नहीं मिल रहा है।

स्वास्थ्य कार्यक्रमों में टीकाकरण को लगभग सभी पंचायत प्रतिनिधियों ने अपनाया है। स्वच्छ शौचालय सुविधा को मात्र 15.9 प्रतिशत सदस्यों ने स्वीकार किया है, जबकि 84 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने स्वच्छ शौचालयों की सुविधा का अभाव बताया। गांव में प्रशिक्षित दाइयों का प्रयोग कम है। आंगनवाड़ी कार्यक्रमों के अन्तर्गत स्वास्थ्य, स्वच्छता एवं गृह शिल्प के प्रशिक्षण का लाभ मात्र कुछ ही लोगों को मिल पाता है।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि अभी भी गांवों में स्वास्थ्य सुविधाओं एवं स्वास्थ्य सेवाओं का अभाव है। वर्तमान में गांवों में टीकाकरण एवं शौचालय निर्माण जैसे कार्यक्रम पंचायत प्रतिनिधियों में अधिक लोकप्रिय सिद्ध हो रहे हैं, जबकि अन्य कार्यक्रमों में उनकी सहभागिता का स्तर पर्याप्त कम है। इसका प्रमुख कारण यह है कि टीकाकरण के द्वारा बच्चों को जान लेवा बीमारियों से बचाए जाने

के प्रति पर्याप्त सचेत है। साथ ही, अनुदान आधारित शौचालय सुविधा उन्हें लाभकारी प्रतीत हुई। प्रशिक्षित दाइयों एवं आंगनवाड़ी जैसे कार्यक्रम कागजों पर अधिक रहा व्यवहार में कम ही है। इनके कार्यकर्ता गांवों में कभी-कभी ही पहुंचते हैं। संतुलित आहार कार्यक्रम में एक बड़ी बाधा आर्थिक विपन्नता है किन्तु साथ ही साथ इसकी उपयोगिता का ज्ञान आंगनवाड़ी कर्मियों पर निर्भर है, जिसकी सेवा सहज उपलब्ध नहीं है।

प्राथमिक शिक्षा विकास कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता

शैक्षिक विकास में प्राथमिक शिक्षा का विशेष महत्व है। इसी स्तर पर व्यक्तित्व के विकास की आधारशिला रखी जाती है। भारतीय संविधान में देश के 14 वर्ष तक के सभी बच्चों के लिए अनिवार्य निःशुल्क प्राइमरी शिक्षा प्रदान करने का प्राविधान किया गया था। संविधान की धारा-45 में शिक्षा के सार्वजनीकरण का लक्ष्य निर्धारित किया गया था, जिससे कि स्वतंत्र भारत का प्रत्येक नागरिक शिक्षित हो जाय अथवा कम से कम साक्षर तो हो जाय। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में सन् 2000 तक सम्पूर्ण साक्षरता का लक्ष्य प्राप्त करने की दृष्टि से शैक्षिक विकेन्द्रीकरण को ध्यान में रखकर उत्तर प्रदेश बेसिक शिक्षा समितियों को व्यापक अधिकार दिये गये हैं।

ग्राम पंचायतों के शिक्षा विषयक कार्य

1. समग्र साक्षरता कार्यक्रम के लिए लोक चेतना का विकास करना और ग्राम शिक्षा समितियों में भाग लेना।
2. प्राथमिक विद्यालयों और उनके प्रबन्ध में छात्रों का और विशेष रूप से छात्राओं का पूर्ण नामांकन और उपस्थिति सुनिश्चित करना।
3. प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम को प्रोन्नत करना और उनका अनुवीक्षण।

ग्राम शिक्षा समिति के शिक्षा विषयक कार्य

1. सम्पूर्ण साक्षरता कार्यक्रमों को सम्मिलित करते हुए प्राथमिक शिक्षा, विशेषतः बालिका शिक्षा का संचालन।
2. प्राथमिक विद्यालय भवनों और अध्यापक आवासों का निर्माण, मरम्मत और रख-रखाव।

3. युवा क्लबों और महिला मंडलों के माध्यम से सामाजिक शिक्षा की प्रोन्नति। अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़े वर्गों के गरीब विद्यार्थियों को पाठ्य पुस्तकें, छात्रवृत्तियां, यूनीफार्म आदि का वितरण करना।
4. सूचना सामुदायिक मनोरंजन केन्द्रों और पुस्तकालयों की स्थापना, प्रौढ़ साक्षरता का क्रियान्वयन।
5. सामाजिक और सांस्कृतिक क्रिया-कलापों, प्रदर्शनियों, प्रकाशनों की प्रोन्नति।

ग्रामीण अंचलों में प्राथमिक विद्यालयों की उपलब्धता

पंचायतों द्वारा प्रायोजित तथा शिक्षा समितियों द्वारा क्रियान्वित होने वाले कार्यक्रमों को आम जनता अपना कार्यक्रम समझती है, इसीलिए ऐसे कार्यों में लोगों का भरपूर समर्थन मिलता है। गांवों की प्राथमिक शिक्षा के विकास में प्रयासरत शिक्षा समितियों की कार्यप्रणाली को जानने के लिए वर्तमान अध्ययन में प्रश्नों के माध्यम से कुछ तथ्य संकलित किये गये। ग्रामीण क्षेत्रों में पंचायत प्रतिनिधियों से प्राथमिक विद्यालयों की उपलब्धता से सम्बन्धित प्रश्न पूछा गया। आप के गांव में प्राथमिक विद्यालय है? इस प्रश्न के संदर्भ में 100 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने गांवों में प्राथमिक विद्यालय होने की बात स्वीकार की। इसी के साथ प्राथमिक विद्यालयों में आवश्यक सुविधाओं की उपलब्धता की स्थिति को जानने का प्रयास किया।

सारणी-4.8

प्राथमिक विद्यालयों में आवश्यक सुविधाओं की स्थिति

	पर्याप्त		अपर्याप्त		योग	
	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत		
कक्षा कक्ष	101	94.4	6	5.6	107	100.0
शिक्षक	86	80.4	21	19.6	107	100.0
सुरक्षित पेयजल	65	60.7	42	39.3	107	100.0
शिक्षण सहायक सामग्री	67	62.6	40	37.4	107	100.0
	हाँ	प्रतिशत	नहीं	प्रतिशत		
शौचालय	41	38.3	66	61.7	107	100.0
खेल का मैदान	21	19.6	86	80.4	107	100.0

सारणी-4.8 से प्राथमिक विद्यालयों में आवश्यक सुविधाओं की स्थिति का पता चलता है। जहां तक विद्यालयों में विद्यार्थियों के कक्षा-कक्ष का प्रश्न है लगभग 94 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने इस बात की जानकारी दी कि प्रत्येक विद्यालयों में विद्यार्थियों के अध्ययन हेतु पर्याप्त कक्षा-कक्ष की सुविधा है। शिक्षकों की स्थिति से

अवगत कराते हुए 80 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने बताया कि विद्यार्थियों का पढ़ाने हेतु शिक्षकों की पर्याप्त संख्या विद्यालयों में उपलब्ध है। प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों के पीने के सुरक्षित पेयजल के प्रश्न पर लगभग 60 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने उपलब्धता की बात स्वीकार की जबकि लगभग 40 प्रतिशत सदस्यों ने अपर्याप्त बताया। शिक्षण सहायता सामग्री की पर्याप्त उपलब्धता की बात सामने आयी। प्राथमिक विद्यालयों में अति आवश्यक सुविधा के नाम पर शौचालयों की स्थिति संतोषजनक नहीं पायी गयी। पंचायत प्रतिनिधियों ने यह अवगत कराया कि एक तिहाई ही विद्यालय ऐसे है, जहां शौचालय उपलब्ध है जबकि दो तिहाई विद्यालयों में यह सुविधा न के बराबर है। बच्चे खुले मैदान में शौच जाते हैं। जहां तक प्राथमिक विद्यालयों में क्रीड़ा स्थल की बात है उसकी स्थिति तो और भी दयनीय है। 20 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने गांव के विद्यालयों में क्रीड़ा स्थल होने की बात स्वीकार की, जबकि 80 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने गांव के विद्यालय में क्रीड़ा स्थल की अनुपलब्धता की बात संज्ञान में लायी।

प्राथमिक विद्यालयों में दोपहर का भोजन

इसी प्रकार प्राथमिक विद्यालय में दोपहर के भोजन के सम्बन्ध में लगभग 100 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने इस बात को स्वीकार किया कि गांव के सभी शत-प्रतिशत विद्यालयों में दोपहर का भोजन विद्यार्थियों को दिया जाता है। पर जब भोजन के स्तर (quality) पर प्रश्न किये गये तो निम्न प्रकार के तथ्य सामने आये जो सारणी में प्रस्तुत है।

सारणी-4.9

प्राथमिक विद्यालयों में दोपहर के भोजन का स्तर

	आवृत्ति	प्रतिशत
अच्छा	34	31.8
सामान्य	64	59.8
खराब	09	8.4
योग	107	100.0

सारणी से स्पष्ट होता है गांव के विद्यालयों में विद्यार्थियों को दोपहर में मिलने वाले भोजन का स्तर अच्छा नहीं है। जब पंचायत प्रतिनिधियों ने उनके गांव के विद्यालयों में दोपहर के भोजन के स्तर के सम्बन्ध में जानना चाहा तो एक तिहाई पंचायत प्रतिनिधियों ने दोपहर के भोजन का स्तर अच्छा बताया, जबकि दो तिहाई पंचायत प्रतिनिधियों ने भोजन का स्तर सामान्य बताया, किन्तु लगभग 10 प्रतिशत

पंचायत प्रतिनिधियों ने विद्यालय में दोपहर को मिलने वाले भोजन को खराब बताते हुए बच्चों के स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ की बात बताई।

प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षण की गुणवत्ता

प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षण की गुणवत्ता को जानने हेतु पंचायत प्रतिनिधियों से एक प्रश्न पूछा गया कि गांव के प्राथमिक विद्यालय में शिक्षण की गुणवत्ता कैसी है। प्रश्न के उत्तर में तो तथ्य आये वे इस प्रकार सारणीबद्ध किये गये।

सारणी-4.10

प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षण की गुणवत्ता

	आवृत्ति	प्रतिशत
अच्छी	42	39.3
सामान्य	53	49.5
खराब	12	11.2
योग	107	100.0

प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षण की गुणवत्ता के प्रश्न पर पंचायत प्रतिनिधियों में से लगभग एक तिहाई सदस्यों ने शिक्षण की गुणवत्ता अच्छी बतायी, जबकि आधे सदस्यों ने इसे सामान्य बताया। मात्र 11.2 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने प्राथमिक विद्यालयों की शिक्षण गुणवत्ता पर प्रश्नचिन्ह लगाते हुए खराब बताया।

ग्राम पंचायत स्तर पर शिक्षा समिति के गठन के प्रश्न पर 22.4 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने शिक्षा समिति के गठन की बात स्वीकार की, 36 प्रतिशत सदस्यों ने बताया की किसी समिति का गठन नहीं किया गया है जबकि 41 प्रतिशत सदस्यों ने व्यक्त किया कि समिति गठन के सम्बन्ध में उन्हें नहीं मालूम है।

गांवों में बालिका विद्यालय हेतु लोगों की जागरूकता

इसी प्रकार गांव में बालिका विद्यालय के प्रचार-प्रसार और उचित व्यवस्था हेतु गांव के लोगों की जागरूकता के प्रश्न पर कुछ तथ्य आये हैं जो इस प्रकार हैं।

सारणी-4.11

गांव में बालिका विद्यालय के प्रचार-प्रसार एवं उचित व्यवस्था हेतु जागरूकता

	आवृत्ति	प्रतिशत
बहुत अधिक	15	14.0
अधिक	69	64.5
कम	11	10.3
बहुत कम	6	5.6
बिल्कुल नहीं	6	5.6
योग	107	100.0

सारणी से स्पष्ट है कि मात्र 14 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने बताया कि गांव में बालिका विद्यालय के प्रचार-प्रसार एवं उचित व्यवस्था हेतु बहुत अधिक लोग जागरूक हैं। 64.5 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों का कहना है कि बालिका शिक्षा के उचित व्यवस्था हेतु गांव के अधिक लोग जागरूक दिखाई पड़ते हैं। 10 प्रतिशत सदस्यों का कहना है कि बालिका शिक्षा के लिए गांव के कम लोग तथा 5.6 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों का कहना है कि गांव के बहुत कम लोग बालिकाओं की शिक्षा व्यवस्था के लिए जागरूक दिखाई पड़ते हैं जबकि इतने ही लोगों का मत है कि गांव के लोग बालिका शिक्षा के लिए बिल्कुल जागरूक नहीं हैं। यही कारण है कि नगरीय क्षेत्रों की अपेक्षा गांवों में बालिकाओं की शिक्षा की व्यवस्था बहुत ही खराब है।

बीच में विद्यालय छोड़ना

ग्रामीण क्षेत्रों में बीच में विद्यालय छोड़ने (ड्रॉप आउट) की समस्या के कारण शिक्षा का वांछित विस्तार नहीं हो पा रहा है। विभिन्न कारणों से अध्ययन क्षेत्र में लगभग 40 प्रतिशत छात्र प्राथमिक स्तर पर ही विद्यालय बीच में ही छोड़ देते हैं।

वर्तमान - अध्ययन के अनुसार बीच में विद्यालय छोड़ने से सम्बन्धित जो तथ्य आये हैं उन्हें इस प्रकार श्रेणीबद्ध किया गया है।

सारणी-4.12
बीच में विद्यालय छोड़ने के कारण

विद्यालय छोड़ने के कारण	आवृत्ति	प्रतिशत
शिक्षा के प्रति जागरूकता का अभाव	9	8.4
घरेलू कार्यों की अधिकता	16	15.0
गरीबी	81	75.7
उत्तर नहीं दे सके	1	0.9
योग	107	100.0

सारणी से स्पष्ट होता है कि अभी भी गांवों में शिक्षा के प्रति लोग जागरूक नहीं हैं। इस सम्बन्ध में जब पंचायत प्रतिनिधियों से पढ़ाई के बीच में विद्यालय छोड़ने के कारणों की जानकारी चाहने पर 8.4 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने शिक्षा के प्रति जागरूकता का अभाव बताया। 15 प्रतिशत प्रतिनिधियों ने घरेलू कार्यों की अधिकता के कारण विद्यालय बीच में छोड़ने की बात बताई। 81 प्रतिशत सदस्यों ने ग्रामीण गरीबी के कारण बीच में विद्यालय छोड़ने की बात संज्ञान में लायी जबकि कुछ सदस्य इस सम्बन्ध में कोई उत्तर नहीं दे सके। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि आज भी गरीबी गांवों में अभिशाप बनी हुई जिसके कारण बच्चों को पढ़ाई बीच में छोड़नी पड़ती है।

निष्कर्ष एवं सुझाव

ग्राम विकास वास्तव में विकास योजनाओं की सफलता पर ही निर्भर करता है। यह एक अनुभूत तथ्य है कि देश में विकास योजनाओं के सफल क्रियान्वयन हेतु महत्वपूर्ण प्रयास करने के बावजूद वांछित लाभ नहीं मिल सका। इस तथ्य को न सिर्फ समाज वैज्ञानिकों बल्कि विकास से जुड़े अनेक लोगों ने स्वीकार किया है कि विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में सबसे बड़ी बाधा वांछित स्तर तक लोगों की सहभागिता सुनिश्चित न हो पाना है। विकास योजनाओं से अनुकूलतम परिणाम प्राप्त करने में लोगों की समर्पित भावना एवं सहभागिता की प्रमुख भूमिका होती है, इसलिए वर्तमान अध्ययन में अनुसंधानकर्ता का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता के स्तर को ज्ञात करना था। अध्ययन से प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से प्राप्त निष्कर्ष प्रस्तुत है।

अध्ययन 12 ग्राम पंचायतों (बरई हरख, हंसराजपुर, कस्तूरीपुर, पश्चिमनारा, सागीपुर, हरीडीह, मैरी, बेरावां, निकदिलपुर, राजगढ़, अरूआंव तथा उमरिया बादल) में किया गया है। ये सभी ग्राम पंचायतें इलाहाबाद जनपद की तहसील सोरांव के अन्तर्गत होलागढ़ विकासखण्ड में है। होलागढ़ विकासखण्ड जिसकी दूरी इलाहाबाद नगर से लगभग 29 किलोमीटर उत्तर पश्चिम में 148.1 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल में फैला है, जिसकी कुल जनसंख्या 125334 है।

अध्ययन हेतु तथ्यों के संकलन में साक्षात्कार तथा अवलोकन प्रविधि का प्रयोग किया गया है। पूर्व निर्मित अनुसूची के माध्यम से तथ्यों के संकलन का कार्य 24 अप्रैल, 2005 से 31 मई, 2005 के मध्य किया गया। पंचायत स्तर पर मुख्य रूप से कृषि विकास, स्वास्थ्य विकास एवं शिक्षा के विकास में अपनी सहभागिता निभा रहे पंचायत प्रतिनिधियों से तथ्यों का संकलन किया गया। गांव के अन्य सम्मानित सदस्यों एवं ग्रामीणों से भी सूचनाएं संग्रहीत की गयी। 107 पंचायत प्रतिनिधियों का साक्षात्कार किया गया। जिसका मुख्य उद्देश्य विकास कार्यों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता के स्तर को ज्ञात करना था।

प्रस्तुत अध्ययन में पंचायत प्रतिनिधियों के सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि का विश्लेषण किया गया है। यह विश्लेषण होलागढ़ विकासखण्ड की ग्राम पंचायतों के पंचायत प्रतिनिधियों को अध्ययन की इकाई मानकर किया गया है। अतः सम्पूर्ण पंचायत प्रतिनिधियों के सामाजिक-आर्थिक स्थिति का चित्र भी इस विश्लेषण द्वारा सामने

उपस्थित होता है। अध्ययन में प्रमुख बिन्दु आयु, जाति, शिक्षा, व्यवसायिक स्थिति और आयगत स्थिति है।

पंचायत प्रतिनिधियों के आयु सम्बन्धी तथ्यों का विश्लेषण करने से यह ज्ञात होता है कि अध्ययन में सम्मिलित 32.7 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि युवा आयु समूह के, 53.3 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि मध्यम आयु समूह के और 14 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि वृद्ध आयु समूह के हैं। अतः अध्ययन में सम्मिलित पंचायत प्रतिनिधियों में मध्यम पीढ़ी का प्रतिनिधित्व अपेक्षाकृत अधिक है। यह तथ्य ग्रामीण पारिवारिक संरचना के परिप्रेक्ष्य में महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

पंचायत प्रतिनिधियों के जातिगत स्थिति का विश्लेषण ग्रामीण सामाजिक संरचना की विशेषताओं को स्पष्ट करता है। वर्तमान अध्ययन के पंचायत प्रतिनिधि, उच्च, मध्यम तथा निम्न जातियों के सदस्य हैं। उच्च जाति के 21.5 प्रतिशत, पिछड़ी जाति के 45.8 प्रतिशत, अनुसूचित जातियों से 30.8 प्रतिशत तथा अल्पसंख्यकों में 1.9 प्रतिशत सम्मिलित पाये गये। पिछड़ी जातियों के सदस्यों में स्थानीय राजनीति के प्रति रुझान बढ़ा है, जिसके कारण इनकी संख्यात्मक दृष्टि से अधिकता है, जबकि उच्चजाति के लोगों में स्थानीय राजनीति के प्रति अरुचि देखने को मिली।

प्रस्तुत अध्ययन के पंचायत प्रतिनिधियों की शैक्षणिक स्थिति अत्यन्त निम्न पाई गयी है। 32.7 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि अशिक्षित हैं। शिक्षित पंचायत प्रतिनिधियों में निम्न शिक्षा प्राप्त पंचायत प्रतिनिधियों (60.6 प्रतिशत) की अधिकता है। हाईस्कूल/इण्टर शिक्षा प्राप्त वर्ग में (24.3 प्रतिशत) और स्नातक/स्नातकोत्तर शिक्षा प्राप्त वर्ग में केवल (7.8 प्रतिशत) पंचायत प्रतिनिधि पाये गये हैं। इस प्रकार अधिकांश पंचायत प्रतिनिधियों की शैक्षणिक स्थिति बहुत कमजोर है।

पंचायत प्रतिनिधियों की व्यवसायिक स्थिति का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि 68.2 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि कृषक, 10.6 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि कृषक मजदूर, 4.7 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि दुकानदार तथा 7.5 प्रतिशत अन्य कार्यों में संलग्न हैं। यद्यपि अधिकांश पंचायत प्रतिनिधियों के जीविकोपार्जन का मुख्य साधन कृषि या कृषि पर आधारित व्यवसाय है।

पंचायत प्रतिनिधियों की आयगत स्थिति का विश्लेषण यह स्पष्ट करता है कि 68.2 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों की मासिक आय 1000 से 2000 के बीच है। 14 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों की मासिक आय ₹0 2000 से 3000, 5.6 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों की मासिक आय ₹0 3000 से 4000, 10.3 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों की मासिक आय ₹0 4000 से अधिक, जबकि सबसे कम अर्थात् ₹0 1000 से कम मासिक आय वाले पंचायत प्रतिनिधियों की संख्या मात्र 1.9 प्रतिशत पाई गई। अतः स्पष्ट है कि अधिकांश पंचायत प्रतिनिधियों की मासिक आय उन्हें निम्न

मध्यवर्गीय स्थिति प्रदान करती है। यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि निम्न आय वर्ग के पंचायत प्रतिनिधि मुख्यतः अनुसूचित जाति के या अल्पसंख्यक वर्ग के सदस्य हैं, जबकि उच्च आय वर्ग में उच्च जाति तथा पिछड़ी जाति के पंचायत प्रतिनिधियों की तुलनात्मक रूप से अधिकता पाई गई है।

कृषि विकास

कृषि विकास कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता के स्तर को ज्ञात करते हुए पाया गया कि पंचायत प्रतिनिधि उन्नतशील बीजों (70 प्रतिशत) एवं उर्वरकों (71 प्रतिशत) के प्रयोग में अग्रणी हैं। अधिकांश पंचायत प्रतिनिधि (72 प्रतिशत) नये कृषि यंत्रों का भी उपयोग करते पाये गये। जहां तक सिंचाई के साधनों के प्रयोग का प्रश्न है, उसमें (90 प्रतिशत) पंचायत प्रतिनिधि संलग्न हैं। कृषि विकास के अन्य कार्यक्रमों यथा कीटनाशक का उपयोग एवं किसान सेवा केन्द्रों के प्रयोग में पंचायत प्रतिनिधियों की भागीदारी पर्याप्त कम है। कीटनाशकों का प्रयोग मात्र 34 प्रतिशत ही करते हैं। किसान सेवा केन्द्रों से लाभ लेने वालों में 48.6 प्रतिशत सदस्य ही पाये गये। पंचायत प्रतिनिधियों की कृषि विकास कार्यक्रमों में सहभागिता का औसत 60 प्रतिशत है।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि पंचायत प्रतिनिधियों की सभी कृषि विकास कार्यक्रमों में अपेक्षित सहभागिता नहीं है जो कि उनके बहुमुखी विकास में बाधक है। बीजों, उर्वरकों एवं कृषि यंत्रों के व्यापक प्रचार-प्रसार ने पंचायत प्रतिनिधियों को उनके प्रयोग हेतु प्रेरित किया है। वांछित लाभ मिलने के कारण आज वे इनके प्रयोग में अग्रणी हो चुके हैं। कीटनाशकों का प्रयोग वे अल्पज्ञतावश नहीं करते। किसान सेवा केन्द्र अधिकारियों की इच्छा पर चलते हैं तथा कृषि आधारित कुटीर उद्योग अविकसित अवस्था में हैं, जो बड़े उद्योगों द्वारा तैयार माल से प्रतिगिता करने में सर्वथा असमर्थ हैं।

स्वास्थ्य विकास

ग्रामीण क्षेत्र में क्रियान्वित किये जा रहे अनेक स्वास्थ्य कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों के लाभान्वित होने से सम्बन्धित तथ्य एकत्र किये गये जो

विश्लेषण से स्पष्ट संकेत है कि गांव में आज भोजन की कोई समस्या नहीं है। इसलिए गांव में सामूहिक रूप से खाद्य पदार्थ उपलब्ध कराने की बात को बहुत बड़ी मात्रा (83 प्रतिशत) सदस्यों ने नकार दिया है। स्वास्थ्य कार्यक्रमों में टीकाकरण को लगभग सभी (97.2 प्रतिशत) पंचायत प्रतिनिधियों ने अपनाया है। स्वच्छ शौचालय सुविधा को 15.9 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों के द्वारा स्वीकार किया गया है। अधिकांश सदस्यों ने प्रसव कार्य के लिए प्रशिक्षित दाइयों का अभाव बताया है।

आंगनबाड़ी कार्यक्रम के अन्तर्गत स्वास्थ्य, स्वच्छता एवं गृह-शिल्प के प्रशिक्षण का लाभ मात्र कुछ पंचायत प्रतिनिधियों ने ही प्राप्त किया है तथा इतनी ही संख्या उन प्रतिनिधियों की है, जिन्होंने संतुलित आहार को समझा एवं अपनाया है। जहां तक गांवों में पेयजल की व्यवस्था का प्रश्न है अधिकांश (54.2 प्रतिशत) पंचायत प्रतिनिधियों ने प्राइवेट हैंडपम्प तथा 43 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने कुओं का ही प्रयोग किया है।

ग्रामीण अंचलों में स्वास्थ्य सुविधाओं के प्रश्न पर अधिकांश पंचायत प्रतिनिधियों ने बताया कि ग्रामीण स्वास्थ्य केन्द्रों पर न तो डाक्टर उपलब्ध रहते हैं और न दवाइयां। आवश्यकता के अनुसार गांव के या नगर के प्राइवेट डाक्टरों की सहायता लेनी पड़ती है। सरकारी स्वास्थ्य सुविधाओं से संतुष्टि के प्रश्न पर 69.2 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि असंतुष्ट ही पाये गये। 84 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने गांवमें स्वच्छता कार्यक्रम का अभाव बताया। गांव में जल निकासी हेतु बनाई गयी नालियों की गुणवत्ता को अधिकांश लोगों ने सामान्य बताया।

विश्लेषण से यह भी अवगत हुआ है कि टीकाकरण जैसे कार्यक्रम पंचायत प्रतिनिधियों में अधिक लोकप्रिय सिद्ध हो रहे हैं, जबकि अन्य कार्यक्रमों में उनकी सहभागिता का स्तर पर्याप्त कम है। इसका प्रमुख कारण यह है कि टीकाकरण के द्वारा बच्चों को जानलेवा बीमारियों से बचाये जाने के प्रति वे पर्याप्त सचेत हैं। साथ ही अध्ययन क्षेत्र में अनुदान आधारित शौचालय निर्माण सुविधा भी पंचायत प्रतिनिधियों द्वारा अपनाई जा रही है। प्रशिक्षित दाइयों एवं आंगनबाड़ी जैसे कार्यक्रम कागजों पर अधिक तथा व्यवहार में कम ही है। इनके कार्यकर्ता गांवों में कभी कभी ही पहुंचते हैं। संतुलित आहार कार्यक्रम में एक बड़ी बाधा अधिक विपन्नता है किन्तु साथ ही, इसकी उपयोगिता का ज्ञान आंगनबाड़ी कर्मियों पर निर्भर है जिसकी सेवा सहज उपलब्ध नहीं दिखती। ग्रामीण स्वास्थ्य विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की भूमिका बहुत प्रभावी नहीं लगती।

शिक्षा विकास

ग्रामीण शिक्षा विकास कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता के स्तर को ज्ञात करते हुए पाया गया कि अध्ययन क्षेत्र के सभी गांवों में प्राथमिक विद्यालय अवस्थित है, इस बात को सभी (100 प्रतिशत) पंचायत प्रतिनिधियों ने स्वीकार किया है। 94.4 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने विद्यार्थियों के अध्ययन हेतु कक्षा कक्ष को पर्याप्त बताया जबकि अध्यापकों की पर्याप्तता पर केवल 80.4 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने अपनी संस्तुति प्रदान की। विद्यालयों में स्वच्छ पेय जल, स्वच्छता कार्यक्रम का प्रभाव सामान्य बताते हुए विद्यालय में शौचालयों की व्यवस्था पर दुःख प्रकट करते हुए यह बात संज्ञान में लाया कि आज विद्यालयों में शौचालय सुलभ नहीं है, जिससे बच्चों को खुले मैदान में शौच करने जाना पड़ता है। प्राथमिक विद्यालयों

में दोपहर के भोजन के सम्बन्ध में शत प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधियों ने इस बात को स्वीकार किया है कि गांव के सभी विद्यालयों में भोजन की व्यवस्था है। पर भोजन की गुणवत्ता के प्रश्न पर केवल एक तिहाई प्रतिनिधियों ने ही स्वीकार किया कि बच्चों को पौष्टिक भोजन मिल रहा है, जबकि बहुत बड़ी संख्या में लोगों ने इसे सामान्य बताया। पता चला है कि शैक्षिक गुणवत्ता की दृष्टि से पता चला है कि वर्तमान में संचालित प्राथमिक विद्यालयों का स्तर काफी निम्न है। प्राथमिक स्तर के पाठ्यक्रम में न तो बच्चों के सामान्य जीवन के क्रियाकलापों को और न ही उनके परिवेश से सीखने के कारकों को सम्मिलित किया गया है। प्राथमिक स्तर पर पाठ्य सामग्री देख कर यह प्रतीत होता है कि पाठ्यक्रम अत्यन्त बोझिल और अव्यवहारिक है तथा बच्चों के व्यक्तित्व विकास एवं उनके भविष्य से भी उनका कोई तारतम्य नहीं है। सारे विकास खण्ड में प्राथमिक शिक्षा की स्थिति एक सी है। पंचायत स्तर पर बनी शिक्षा समितियां निष्क्रिय हैं। गांवों में प्राथमिक शिक्षा की स्थिति पंचायत प्रतिनिधियों की अज्ञानता के चलते बड़ी दयनीय स्थिति में है।

सुझाव

- पंचायत प्रतिनिधियों को सुदृढ़ प्रसार तंत्र के जरिए कृषि औजारों/उन्नतिशील बीजों तथा रासायनिक उर्वरकों के उपयोग की मात्रा के व्यापक प्रयोग किये जाने के लिए जानकारी दी जाए।
- कृषि यंत्रों के संचालन, मरम्मत और रखरखाव के मामले में पंचायत प्रतिनिधियों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए जाए।
- किसानों को जागरूक बनाने हेतु पंचायत प्रतिनिधियों को ऋण और रियायतें उपलब्ध होने से सम्बन्धित जानकारी दी जाए।
- पंचायत स्तर पर मिट्टी की जांच हेतु प्रयोगशाला तथा उससे सम्बन्धित उपकरणों की व्यवस्था की जाय, जिससे फसलों की उत्पादकता बढ़ सके।
- खेती में परम्परागत खादों के प्रयोग हेतु पंचायत प्रतिनिधियों को जागरूक किया जाए।
- किसान सेवा केन्द्रों, सिंचाई के साधनों को सुदृढ़ किया जाय, जिससे किसानों की खेती से सम्बन्धित आवश्यकताएं पूरी हो सकें।
- किसानों को दिये जाने वाले ऋण में अधिक से अधिक रियायत दी जाय।

- फसलों का बीमा किया जाय, जिससे प्राकृतिक आपदा जैसे बाढ़, सूखा से खराब हुई फसलों की भरपाई हो सके।
- कृषि विकास समितियों को जागरूक किया जाय, जिससे पंचायत स्तर पर खेती को लाभकारी बनाने में पंचायत प्रतिनिधि अपनी सही भूमिका निभा सके।
- गांवों में उपलब्ध स्वास्थ्य सेवाओं को और प्रभावी बनाने के लिए प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों और स्वास्थ्य उपकेन्द्रों के कार्यों की निगरानी में पंचायत प्रतिनिधियों को शामिल किया जाय।
- गांव में मौजूदा स्वास्थ्य सुविधाओं को अधिक कार्यकुशल और जिम्मेदार बनाया जाय, जिससे वहां के लोगों को बेहतर स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध हो सके।
- समय-समय पर पंचायत स्तर पर स्वास्थ्य मेलों का आयोजन कर के लोगों को जान-लेवा बीमारियों का निःशुल्क स्वास्थ्य परीक्षण तथा निःशुल्क दवाइयां भी उपलब्ध कराई जाय।
- पंचायत स्तर पर स्वास्थ्य जागरूकता कार्यक्रम की व्यवस्था की जानी चाहिए, जिससे लोग असाध्य बीमारियों से बच सके। इस कार्यक्रम में पंचायत प्रतिनिधियों की अहं भूमिका हो सकती है।
- गांवों में शिक्षा के समुचित विकास हेतु यह आवश्यक है कि सर्वप्रथम पंचायत प्रतिनिधियों को शिक्षित किया जाय, क्योंकि जिनके कंधों पर गांव के प्राथमिक शिक्षा का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व है, वही शिक्षित नहीं होगा तो गांव में शिक्षा के विकास का कार्यक्रम कैसे सफल होगा।
- पंचायत स्तर पर बहुतायत में पाया गया कि शिक्षा समितियों का गठन ही नहीं किया गया। अतएव, लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की अवधारणा को मूर्तरूप प्रदान करते हुए प्राथमिक शिक्षा के विकास के लिए पंचायत स्तर पर शिक्षा समितियों का गठन किया जाए।
- प्राथमिक विद्यालयों में भवन, अध्यापक, पाठ्य पुस्तकें, शौचालयों मनोरंजन केन्द्रों, पुस्तकालयों, दोपहर के भोजन की व्यवस्था को सुदृढ़ किया जाय।
- शिक्षा समिति का अध्यक्ष उप-प्रधान होता है। इस समिति में छः पंचायत सदस्यों तथा तीन अभिभावक भी शामिल होते हैं। इस प्रकार की शिक्षा समिति को ग्राम पंचायत के अन्तर्गत आने वाले प्राथमिक शिक्षा, उच्च प्राथमिक शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा, साक्षरता तथा शिक्षा सम्बन्धी कार्यक्रमों की देख-रेख और उसका सुचारु

रूप से क्रियान्वयन का अधिकार दिया गया है। यह तभी सम्भव है जब शिक्षा समिति के सदस्यों को इस कार्यक्रमों के सम्बन्ध में जानकारी हो। जानकारी हेतु उन्हें प्रशिक्षित किया जाय।

- शिक्षण प्रक्रिया को रूचिपूर्ण बनाने के लिए बच्चों की पढ़ाई को मनोरंजन कार्यक्रम से जोड़े जाने की आवश्यकता है, जिससे पढ़ाई की ओर बच्चों की रूचि बढ़े।

अध्ययन से अवगत हुआ कि प्राथमिक शिक्षा पाठ्यक्रम पूर्णतया अव्यवहारिक एवं दोषपूर्ण है। बाल मनोविज्ञान पर आधारित न होकर बस्ते के बोझ के आधार पर पाठ्यक्रम का स्तर आंका जाने लगा है। बच्चों की रूचि, क्षमता, मानसिक योग्यता एवं शिक्षा के माध्यम को दरकिनार कर पाठ्य-सामग्री से उसके बचपन को लाद दिया जाता है, जो न तो जीवनपरक है और न ही मूल्य परक।

प्रारम्भिक शिक्षा के विकास में जन-समुदाय की अहम भूमिका होती है, परन्तु वर्तमान अध्ययन में अभी भी शिक्षा के प्रति सजगता का अभाव देखने को मिलता है। अतएव, गांव के विभिन्न विकास कार्यक्रमों में पंचायत प्रतिनिधियों की सहभागिता अपेक्षित है।